खंड 3
गाँधी की विरासत

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 8 अहिंसक आंदोलन

संरचना

8.1 प्रस्तावना

लक्ष्य एवं उद्देश्य

8.2 अहिंसक आंदोलनो की प्रकृति

8.3 अहिंसक आंदोलन एवं स्वतन्त्रता

8.3.1 भूदान आंदोलन

8.3.2 नव कृषक आंदोलन

8.3.3 चिपको आंदोलन

8.3.4 जंगल बचाओ आंदोलन

8.3.5 निशब्द घाटी आंदोलन

8.3.6 नर्मदा बचाओ आंदोलन

8.3.7 प्रतिबंध आंदोलन : मध्य प्रदेश में अर्क विरोधी शराब विरोधी आंदोलन

8.3.8 अन्ना हजारे का जन लोकपाल विधेयक - भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन

8.3.9 निर्भया आंदोलन

8.4 सारांश

8.5 अभ्यास प्रश्न

8.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.1 प्रस्तावना

भारत के स्वतन्त्रता का संघर्ष इस बात का प्रमाण हैं की बड़ा परिवर्तन भी बिना रक्तपात और हिंसा किए अर्थात अहिंसा के द्वारा लाया जा सकता है। महात्मा गाँधी ने ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ वर्षों तक अहिंसक संघर्ष का नेतृत्व किया जिसके फलस्वरूप भारत को 1947 में स्वतन्त्रता मिली। गाँधीजी की विचारधारा सत्य, त्याग, अहिंसात्मक निस्वार्थ सेवा और सहयोग पर आधारित थी। आधुनिक काल में सामाजिक विरोध के प्रदर्शन के लिए अहिंसात्मक तरीकों से की गयी कारवाई एक शक्तिशाली माध्यम बन गयी है। गाँधीजी के अनुसार व्यक्ति को निर्भीक होना चाहिए, कायर नहीं। उसे अपना दृष्टिकोण, सलाह, और विचार बिना हिंसात्मक हुए प्रस्तुत करना चाहिए। गाँधीजी ने कहा है - "सत्य से बड़ा कोई ईश्वर नहीं है"। गाँधीजी के विचार के अनुसार संसार के किसी भी समस्या का सर्वोत्तम समाधान अहिंसा है। गाँधीजी के नीति सत्य, त्याग, अहिंसा निस्वार्थ सेवा तथा सहयोग के संयोग की रही है।

गाँधी के विचार में अहिंसा का अर्थ रक्तपात को नकारना मात्र नहीं, बल्कि क्रोध, स्वार्थ घृणा एवं शत्रुता का अभाव था। गाँधी के अनुसार अहिंसा अनिवार्यतः सत्याग्रह के सिद्धान्त से जुड़ी है। गाँधी के अनुसार सत्याग्रह हेतु नैतिक साहस के अतिरिक्त और किसी भी शस्त्र की आवश्यकता नहीं है। भारत एक लोकतान्त्रिक राष्ट्र है जहां के नागरिक निर्णय लेने की प्रक्रिया में प्रत्यक्ष तौर पर संलग्न हैं। परंतु फिर भी यहाँ संसाधन का असमान वितरण, कमजोर वर्गों का शोषण और मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है। भ्रष्टाचार और राजनीति, व्यवस्थाओं को भ्रष्ट करती है जबकि इसे साफ सुथरा होना चाहिये। इनके विरुद्ध हुए

डॉ मनीश रॉय, सहायक प्रोफेसर, श्री गुरु नानक देव खालसा कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली एवं सुरुचि अग्रवाल, शोधार्थी, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली–25

आंदोलनों तथा भारत के स्वतन्त्रता के उपरांत हुए राजनैतिक प्रतिरोधों में गाँधी के सत्याग्रह एवं अहिंसा के विचारों के प्रभाव का उपयोग का अनुभव प्रत्यक्ष तौर किया जा सकता है। गाँधी के विचारों से उपजा अहिंसा का सामाजिक सिद्धान्त इन दिनों नयी सामाजिक एवं राजनैतिक व्यवस्था गढ़ने एवं बनाए रखने की कुंजी/चाबी प्रमाणित हो रहे हैं।

लक्ष्य एवं उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत आप निम्नलिखित विषयों को समझ सकेंगेः

- गाँधी की अहिंसा एवं अहिंसक नीति।
- अहिंसक आंदोलनों की प्रकृति।
- समकालीन आंदोलनों पर गाँधी के अहिंसात्मक विचारों का प्रभाव।
- स्वतन्त्रता के उपरांत घटित प्रमुख अहिंसात्मक आंदोलन

8.2 अहिंसक आंदोलनों की प्रकृति

अहिंसक आंदोलन/प्रत्यक्ष कार्रवाई की सफलता दो मुख्य पहलुओं से परिभाषित होती है जो विरोधाभासी प्रकृति के हैं जैसे की विघटन एवं अनुशासन। बड़े स्तर पर अहिंसात्मक प्रतिरोध का सबसे प्रभावी एवं लोकप्रिय लक्षण निस्संदेह विघटन ही है। असहयोग एवं वृहतस्तरीय नागरिक अवज्ञा जिनमे बहिष्कार, धरना जैसे तरीके अन्यायपूर्ण कानून की ओर ध्यान आकर्षित कर सकते हैं। उदाहरण के तौर पर संयुक्त राज्य अमरीका में हुए नागरिक अधिकार आंदोलन (अलगाव के विरुद्ध अश्वेतों) में 'बसों का बहिष्कार' तथा 'भोजन विरोधी बैठक' अलगाव की क्रूरता को दर्शाने में प्रभावकारी रहे थे। समय के साथ हमने ये सीखा कि लोगों की अहिंसा लोगों की विशाल संख्या की भागीदारी को आकर्षित करने में किसी भी हथियारबंद आंदोलनों से अधिक प्रभावकारी और सक्षम हो सकता है।

भागीदारी तथा लोकप्रिय सहमति को वापस लेने, या विशिष्ट संस्थानों तथा अन्यायपूर्ण प्रतीत कानूनों की आलोचना तथा अवहेलना करने के द्वारा सफल हुए अहिंसक अभियान सरकार की न्यायोचितता तथा अधिकार पर प्रश्न खड़े करते हैं। विरोध प्रदर्शन के अहिंसक होने हेतु विघटन भी अनुशासित होना चाहिए। विरोध प्रदर्शनकर्ताओं को त्याग एवं कष्ट सहने की स्वेच्छा द्वारा संयम दर्शाना चाहिये। इसमे सप्ताहों तक चलने वाले धरना-प्रदर्शन-मार्च के दौरान अनुशासन, जुलूस के दौरान पुलिस तथा विरोधी पक्षों द्वारा किसी भी तरह का उकसावे तथा हिंसा से अप्रभावित रहते हुए प्रतिरोध करना - सबकुछ शामिल है। गाँधी के अनुसार अहिंसा की शिक्षा सत्रों तथा आचार संहिता का केंद्र बिन्दु इसी प्रकार का अनुशासन तथा संयम स्थापित करना ही था।

8.3 आजादी के बाद के अहिंसक आंदोलन

8.3.1 1940 का भूदान आंदोलन

उन्नीसवी शताब्दी के चौथे दशक के उत्तरार्ध तथा पांचवें दशक के प्रारम्भ में गाँधी के एक अनुयायी आचार्य विनोबा भावे ने भूदान आंदोलन की संकल्पना का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। भूदान ने भारत के भूमिविहीन किसानों हेतु भूमि सुनिश्चित करने की समस्या के समाधान की उम्मीद दिखाई परंतु ये अनुमान लगाना गलत होगा की भूदान का संबंध पूर्ण रूप से भूमि के संग्रहण तथा वितरण मात्र से है। यह आंदोलन उस सर्वोदय समाज के ओर बढ़ने की दिशा में लिया गया प्रथम कदम था जो सामाजिक-आर्थिक उन्मुख अहिंसात्मक

रचनात्मक परिवर्तन के कार्यक्रम द्वारा भारत के सामाजिक संरचना की नैतिकता में तीव्र परिवर्तन हेतु कथित सर्वोन्मुख क्रांति प्रतीत हो रहा था। 1963 में यह आन्दोलन ज्यादा संकेंद्रित स्वरूप में प्रारम्भ हुआ जिसमें निम्न गतिविधि पहचाने गए।

a) सम्पूर्ण देश में ग्रामदान गांवों की स्थापना

b) इन ग्रामों में खादी एवं ग्रामीण उद्योगों का विकास जिससे ये गाँव बाह्य संसाधनों की आवश्यकता से मुक्त एवं स्वनिर्भर बन सके.

एवं

c) किसी भी हिंसा के प्रकोप की रोकथाम अथवा हिंसा उत्पन्न हो जाने की स्थिति मे इसे अहिंसक तरीकों से नियंत्रित करने हेतु शांति सेना की स्थापना एवं प्रशिक्षण।

d) सर्वोदय समाज मे एकमात्र विचारधारा परस्पर सहयोग हो जो की इसकी प्रेरणा एवं संचालक शक्ति बन सकने की व्यक्तिगत स्पर्धा।

e) इसके पीछे दृष्टिकोण ये थे धनी जमींदारों के विचारों को प्रभावित किया जा सके ताकि वो स्वेच्छा से, बिना किसी बलप्रयोग अथवा हिंसात्मक तरीका आजमाये बगैर, अपनी अतिरिक्त भूमि छोडने के लिए तैयार हो जाएँ।

स्वतंत्रता के बाद भारत में भूमिहीन निर्धनो और जरूरतमंदों के लिए भूदान एक ऐसे उम्मीद की किरण बन गया जिससे वो शोषक भूमि सिद्धांतों एवं जमींदारों से मुक्त होकर अच्छे तरीके से अपने जीवन निर्वाह कर सकें। पूर्ण रूप से गाँधीवादी विचार धारा से उत्पन्न हुए ये (आंदोलन) जिसका उद्देश्य समाज की सर्वश्रेष्ठ बेहतरी थी, साहसपूर्ण प्रोत्साहन के अभाव मे गतिशीलता खो बैठा परंतु भूदान आंदोलन के अनुभव ने इस संभावना को पुनःस्थापित किया कि सत्याग्रह (सत्य अहिंसक आन्दोलन) को ब्यवहारिक जीवन में भी आत्मसात किया जा सकता है और कार्यान्वित किया जा सकता है।

8.3.2 1980 का नव किसान आंदोलन

नव किसान आंदोलन की शुरुआत ऐसे समय पर हुई जब भारत में कृषि की स्थिति पूर्णतया जर्जर हो चुकी थी। इसका प्रारम्भ तब हुआ जब व्यवसाय की परिस्थितियां कृषि के विपरीत जा रही थी, कृषि आधारित आय कम होती जा रही थी और कृषि लागत मूल्य बढ़कर किसानों की पहुँच से बाहर होते जा रहे थे। यह महाराष्ट्र में शेतकारी संगठन द्वारा प्रारम्भ हुआ जब इसने प्याज के लिए पारिश्रमिक मूल्य की मांग की। बाद में यह आंदोलन कर्नाटक में कर्नाटक राज्य राइता संघ तथा उत्तर प्रदेश में भारतीय किसान संगठन के नेतृत्व में चला। हालांकि इन सारे आंदोलन का प्रारम्भ लगभग समकालीन था परंतु किसान संगठनों के मध्य विभिन्नता व सामंजस्य का अभाव इस आंदोलन को भारतीय राजनीति में बड़ी शक्ति बनने में बाधक रहा। विभिन्नता व सामंजस्य के अभाव के बावजूद नव किसान आंदोलन से किसानों के बारे में संभाषण, विश्लेषण एवं अनुभूतियों में उल्लेखनीय अंतर आया। इसने नीति निर्माताओं को कृषि की गहरी समस्याओं तथा कृषक वर्ग की स्थितियों को समझने के लिए बाध्य किया। इसके अतिरिक्त ये आंदोलन ग्रामीण क्षेत्र में कोई भी उल्लेखनीय सुधार लाने में प्रभावी नहीं हो सके। इसका कारण यह था कि शुरुआत से ही ये आंदोलन आंतरिक कलह तथा अंतर्विरोधों पर काबू पाने में असमर्थ था।

इसका एक अन्य कारण यह भी था कि इन आंदोलनों की कोई आंतरिक उग्र कार्यसूची नहीं रही, उदाहरण हेतु, इन आंदोलनों ने कभी भी तीव्र/त्वरित भूमि सुधारों की मांग नहीं की न ही कभी इन्होने समाज के ग्रामीण क्षेत्र में बसे उस वंचित वर्ग की कोई चिंता की जिसमे दलित भी शामिल हैं। शुरुआत से ही इन आंदोलनों के समृद्ध वर्ग अथवा बाजारोन्मुख

किसानों से जुड़े होने के कारण इनपर अन्य किसी भी किस्म की राजनीति का प्रभाव नहीं पड़ा। यही कारण है कि ये अपना सामाजिक आधार खोते जा रहे हैं। इसके अन्य कारणों में यह भी है कि इनका कार्यक्षेत्र समृद्ध अथवा बाजारोन्मुख के आवास तक ही सीमित रहा।

कमियाँ चाहे जो भी रही हों, परंतु कोई इस बात से इंकार नहीं कर सकता की नव किसान आंदोलन ने किसानों के आंदोलनों के अध्ययन को नया अर्थ दिया। यह कहा जा सकता है की विभिन्नताओं के बावजूद ये (आंदोलन) गाँधी के आदर्शों को प्रतिबिम्बित करते है।

8.3.3 चिपको आंदोलन.1973

चिपको आंदोलन एक अहिंसक सामाजिक तथा पर्यावरण से जुड़े आंदोलन की शुरुआत गढ़वाल के हिमालय पर्वतीय क्षेत्र मे, जो वर्तमान में उत्तराखंड राज्य में है, से हुई।

1973 में आई भयंकर प्रलयकारी बाढ़ से अलकनंदा घाटी के क्षेत्र में जीवन और संपत्ति का भयानक नुकसान हुआ था। एक दिन महिलाओं ने कुछ मजदूरों को आरी के साथ देखा। ये मजदूर व्यसायिक ठेकेदारों द्वारा पेड़ों को काटने के लिए भेजे गए थे। महिलाओं ने इसका विरोध किया और पेड़ों को बचाने का संकल्प लिया। महिलाओं के छोटे समूहों ने सतत निगरानी रखी और पेड़ों से चिपक गयी ताकि इन पेड़ों को काट कर गिराया नहीं जा सके।

सुंदर लाल बहुगुणा, गौरी देवी और गंगा देवी तथा इनके अन्य सहायकों के नेतृत्व में ये आंदोलन काफी सफल रहा। इसके उपरांत सरकार ने इस क्षेत्र में हरे तथा जीवित पेड़ों के काटने पर प्रतिबंध लगा दिया।

8.3.4 1970 का जंगल बचाओ आंदोलन

1970 में जब सरकार ने साल वन को, जिसमे काफी मूल्यवान सागवान (टीक) के पेड़ थे, स्थानांतरित करने का निर्णय लिया तो बिहार के आदिवासी इस निर्णय के विरोध में भारी संख्या में बाहर निकाल आए। बिहार से शुरू हुआ ये आंदोलन अन्य राज्यों जैसे उड़ीसा तथा झारखंड तक फैल गया।

8.3.5 1970-1980 का शांत घाटी (पसमदज टंससमल) आंदोलन

साइलेंट वैली (शांत घाटी) जो केरल के पलक्कड जिले के सदाबहार समशीतोष्ण वन में स्थित है, की सुरक्षा के लिए शुरू हुये इस आंदोलन ने कई लोगों और कार्यकर्ताओं को एकत्रित किया। इस विरोध का कारण घाटी में कई जल विद्युत परियोजनाओं को रोकना था।

8.3.6 1885 का नर्मदा बचाओ आंदोलन

नर्मदा बचाओ आंदोलन (सेव द नर्मदा मूवमेंट) निश्चित तौर पर ऐसा आंदोलन था जो अनियमित तथा गैर जिम्मेदाराना तरीकों के होने वाले विकास कार्यों के विरुद्ध था। यह बांध निर्माण के कारण प्रभावित लोगों को न्याय दिलाने का धर्मयुद्ध था। इस आंदोलन का मुख्य उद्देश्य सरदार सरोवर परियोजना का विरोध करना था जो नर्मदा पर बनने वाले सबसे ऊंचा बांध था।

यह संघर्ष 1985 में प्रारंभ हुआ जिसमे अनशन/भूख हड़ताल, सद्भावना यात्रा तथा जन प्रसार माध्यमों द्वारा लोगों को इस मामले के प्रति जागरूकता फैलाई गयी जिससे यह

आंदोलन उन उल्लेखनीय अहिंसक संघर्षों मे एक माना गया जिन्हें लोगों को न्याय सुनिश्चित करने के लिए किया गया था। 1989 में यह एक पर्यावरण तथा आजीविका से जुड़ा संपूर्ण विशाल आंदोलन बन गया जिसमें बांध निर्माण का विरोध तथा न्यायोचित पुनर्स्थापना की मांग की गयी।

मेधा पाटकर ने, जो इस आंदोलन की एक अनुकरणीय नेता रही हैं, अनगिनत अनशन तथा भूख हड़ताल किया जिसके परिणाम स्वरूप वर्ल्ड बैंक ने, जो इस परियोजना के प्रायोजकों/वित्त प्रदाताओं में से एक था, इस पूरे परियोजना की पुनः समीक्षा की जिसके परिणाम स्वरूप वह परियोजना से अलग हो गया। इस पूरे संघर्ष में आंदोलन के कार्यकर्ताओं को कड़ी पुलिस कार्रवाई और लाठीचार्ज का सामना करना पड़ा।

8.3.7 आंध्र प्रदेश का निषेध आंदोलन : अर्क विरोधी/शराब विरोधी आंदोलन(1993-94)

निषेध का अर्थ हैं - नशीले/अल्कोहलीक पेय पदार्थों का कानूनी तरीकों से पूर्ण रूप से विरोध/बहिष्कार तथा इन पदार्थों का स्वैच्छिक त्याग/बहिष्कार। गाँधी के भारत के प्रति दृष्टिकोण में निषेध का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होने महसूस किया कि मद्यपान एक निरंतर बुराई है विशेष रूप से जब यह आदत में शामिल हो जाती है जिससे परिणामस्वरूप अन्य कई बीमारियां फैलती हैं। मद्यपान की समस्या से निपटने के लिए गाँधी ने तीन स्तरीय उपाय बताए : अवैध मद्य उत्पादन के विरुद्ध कानूनी कदम उठाए जाएँ और फिर विशेष विभाग/अभिकरणों द्वारा इन्हे सख्ती से लागू किया जाए, गलियों और अन्य सार्वजनिक स्थानों पर मद्यपान करनेवालों पर उचित जुर्माना लगाने तथा इसकी पुनरावृति करने वालों को कैद का प्रावधान हो और अंतिम तौर पर, ऐसे स्वयंसेवी संस्थानों, विशेष तौर पर जिनका नेतृत्व महिलाएँ करती हों उन्हें प्रोत्साहन दिया जाए ताकि वो पिछड़े इलाकों में जहां मजदूर वर्ग रहता हो, कार्य करे और एवं मद्यपान की आदत के शिकार लोगों को इस लत से छुटकारा दिलवाए।

निषेध पर गाँधी के विचार भारतीय संविधान में भी प्रतिध्वनित होते हैं। इसके नीति निर्देशक सिद्धान्त (धारा 47) मे उल्लेख है कि सरकार/राज्य सैद्धांतिक स्तर पर मद्यनिषेध का पालन करे। जबकि अन्य नीति निर्देशक तत्वों को केंद्र तथा राज्य सरकारों ने सैद्धान्तिक तौर पर अपनाया, परंतु मद्यनिषेध को महत्व नहीं दिया गया। अभी भी गुजरात भारत का एकमात्र राज्य है जहां मद्यनिषेध लागू है।

हरियाणा तथा आंध्र प्रदेश, इन दो राज्यों में प्रायोगिक तौर पर मद्यनिषेध लागू किया गया और फिर हटा लिया गया जिसका सिर्फ वित्तीय कारण ही नहीं था बल्कि यह भी कारण था कि ये राज्य अवैध शराब निर्माण एवं शराब की तस्करी को रोक पाने में अक्षम थे। हरियाणा में मद्यनिषेध लागू करने की कई बार कोशिश की गई पर वो कामयाब नहीं हुई। महिलाओं के जिन संगठनों ने मद्यनिषेध के विरुद्ध संघर्ष किया था उन संगठनों ने ही मद्यनिषेश से प्रतिबंध हटाने का समर्थन किया क्योंकि उन्हे पता चला कि जिन पुरुषों को मद्यनिषेध की लत थी वो मद्यनिषेध के बाद अवैध रूप से उपलब्ध शराब का सेवन करने लगे थे। इसके परिणामस्वरूप जहरीली/मिलावटी शराब के सेवन से कई दुखद दुर्घटनाएँ हुई। 1994 में आंध्र प्रदेश मे आंशिक तौर पर मद्यनिषेध लागू किया गया जिसके द्वारा अवैध शराब पर प्रतिबंध लगा दिया गया। इसके पूर्व महिलाओं द्वारा मद्यनिषेध के लिए काफी दिनों तक विरोध प्रदर्शन तथा सामाजिक आंदोलन चलाया गया।

मद्यनिषेध आंदोलन कई समान घटनाओं की पुनरावर्षति होने से हुआ था जैसे शराब के लत मे डूबे व्यक्ति द्वारा महिलाओं द्वारा उपार्जित कमाई को खर्च करना, घर के सामानों को

बेचना एवं नशे की हालत में मारपीट तथा कई प्रकार के घरेलू हिंसा करना। अर्क विरोधी शराब विरोधी आंदोलन का प्रारम्भ रोसम्मा नाम की एक उम्रदराज महिला जो वयस्क शिक्षा कार्यक्रम से प्रभावित थी, द्वारा दुबगुंटा में हुआ जो नेल्लोर जिले का एक सुदूर गाँव है। इस गाँव की महिलाओं द्वारा किया गया विरोध आस पड़ोस के गाँव तक फैल गया। दंत कथाओं के रूप में तथा स्थापित सामाजिक सूचना तंत्रों द्वारा मद्य विरोध की खबर फैल गयी। कई अन्य जिलों के अन्य वर्गों की महिलाओं द्वारा भी स्वतः स्फूर्त कार्रवाई हुई जिसने स्थापित सामाजिक रिवाजों को तोड़ा - जैसे की पितृसत्ता तथा जन कार्यक्रमों में महिलाओं की गैर भागीदारी।

हालांकि आंध्र प्रदेश का अर्क विरोधी प्रदर्शन महिलाओं द्वारा शुरुआत करने एवं उनकी भागीदारी से निर्मित हुआ था परंतु इसमें कई संगठनों ने भागीदारी की और सहयोग दिया और इस प्रकार महिलाओं को पूरे राज्य में एकत्रित एवं संगठित होने में मदद की। भागीदारी करने वाले इन संगठनों ने महिलाओं को मद्य निषेध के संघर्ष के लिए डटे रहने में सहायता की। ये संगठन कई प्रकार के थे - राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, महिलाओं के जमीनी स्तर की मुद्दा आधारित अनौपचारिक समूहों से लेकर विभिन्न प्रकार के आदर्शों/उद्देश्यों/दृष्टिकोणों/प्राथमिकताओं तथा राजनैतिक प्रेरणा वाली दल तक। अर्क/शराब की लत तथा सरकारी नीतियों के विरुद्ध लड़ने के लिए ये सब एक साथ आ गईं। ये समझा गया कि राज्य की नीतियों का अर्क एवं शराब को निषेध करने की दिशा में परिवर्तन सर्व प्रथम आवश्यकता है।

विरोध प्रदर्शन के शुरुआती दौर में पुलिस द्वारा कई महिलाओं पर लाठी चार्ज किया गया और कुछ को गिरफ्तार किया गया। इन्हें अर्क और शराब के ठेकेदारों द्वारा धमकाया गया और अर्क/शराब विक्रेताओं द्वारा नौकरी पर रखे गए बदमाशों द्वारा इनमे से कुछ महिलाओं को पीटा भी गया। महिलाएं किसी भी प्रकार के हिंसा का सहारा लिए बिना इन सब बाधाओं पर विजय प्राप्त की जिसका श्रेय उन समाचार माध्यम, विपक्षी राजनीतिक दल तथा इनके अन्य संगठनों को जाता है जिन्होंने इन महिलाओं को सहायता प्रदान किया। अपने सदस्यों तथा संसाधनों से समर्थ इन भागीदार संगठनों के अर्क विरोधी आंदोलन को एक क्षितिज तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जिससे एक भावनात्मक आंदोलन तदर्थ समूहों द्वारा जमीनी स्तर से उठाकर विशाल आधार वाले आंदोलन में परिवर्तित हो गया। इसके साथ ही आंदोलन ने अभूतपूर्व गति पकड़ ली। शीघ्र ही यह एक राजनैतिक आंदोलन बन गया जिसने राजनीतिक संस्थाओं को कई झटके दिये। इन सबने शुरुआत में प्रतिक्रिया के तौर पर पुलिस कार्रवाई की परंतु बाद में इन्हें समझ में आ गया और तदनुसार इन्होने अपने पूर्व के अड़ियल रवैये को छोड़ा और मद्य निषेध के पक्ष में समय नियोजित कार्यक्रम लेकर आए।

सामाजिक सहायता कई रूपों मे आई। 'सारा व्यथिरेखा कार्यचरन समिति' के नाम से एक संगठन बना जिसका कार्य मद्यनिषेध के लिए धरना और शराब की दुकानों के घेराव, शराब की पाकेटों को आग लगाना और शराब की बोतलों को तोड़ना था। कई जगहों पर ऐसी स्वतः स्फूर्त घटनाएँ हुईं जिसमे शराब के नशे मे डूबे ग्रामीणों एवं झुग्गी वासियों पर जुर्माना लगाया गया। विरोध प्रदर्शन की इस तीव्रता के परिणामस्वरूप कुछ ठेकेदारों एवं व्यापारियों ने स्वयं ही शराब का व्यवसाय और शराब की दुकानों को बंद कर दिया।

इस पूरे आंदोलन में प्रिंट मीडिया ने उत्प्रेरक की महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। स्थानीय भाषा के सबसे लोकप्रिय दैनिक एनाडू ने अर्क विरोधी प्रदर्शनों और घटनाओं को सबसे अधिक छापा और प्रचार किया। एक अन्य तेलगू समाचारपत्र भी इस आंदोलन में शामिल हुआ। अर्क विरोधी आन्दोलन के शीघ्र विस्तृत होने का एक महत्वपूर्ण कारण इस आंदोलन के बारे

में लगातार छपते रहना संवादों का आदान प्रदान तथा इस आंदोलन के बारे में स्थानीय भाषा के अखबारों और पत्रिकाओं में छपते रहना भी था। इन सबसे आंदोलन का प्रचार प्रसार शीघ्रता से हुआ जिसमें विरोध प्रदर्शन के कई अनोखे तरीके अपनाए गए। ऐसी कुछ अद्‌भुद घटनाओं में देखा गया कि कुछ गाँव में कई लोगों नें, जिनमें कई शराब के नशे की लत का शिकार भी थे, उन्होनें आगे बढ़कर शराब नहीं पीने की शपथ ली या संबंधित ग्रामों में शराब की बिक्री नहीं होने देने की शपथ ली।

कई कारणों से आंध्रप्रदेश का अर्क विरोधी (1993-1994) एक धमाकेदार रूप से सफल रहा। इसमें एक सामान्य तथा पारदर्शी मामला 'मद्यनिषेध' शामिल था जिसे सभी के द्वारा समझा गया। समाज के निचले स्तर के महिलाओं ने इसमें विशाल संख्या में भाग लिया। इस आंदोलन के गति पकड़ने और टिके रहने का एक कारण स्थानिक समाचार माध्यम तथा कई स्वयंसेवी संगठन एवं कई राजनैतिक संगठनों द्वारा समर्थन मिलना भी रहा। इस आंदोलन के शक्तिशाली होने का कारण यह भी था कि इसमें सामान्य रूप से उपलब्ध संसाधनों (लोग, वस्तु, विचार तथा संगठनों) की भागीदारी और उनका कुशल प्रबंधन भी रहा। इस आंदोलन के लोकप्रिय तथा लाभप्रद हो जाने के बाद यह अजेय होता गया जिसने प्रशासन की आधिकारिक चुनौतियों का असर भी कम कर दिया। परंतु इन सबसे बढ़कर एक बड़ा कारण यह भी था कि ये आंदोलन अहिंसक एवं अनुशासित आंदोलन के रूप में टिका रहा।

8.3.8 अन्ना हजारे का जन लोकपाल विधेयक : भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन 2011

जब 5 अप्रैल, 2011 को नई दिल्ली में जंतर-मंतर पर भ्रष्टाचार-विरोधी कार्यकर्ता अन्ना हजारे ने भूख हड़ताल शुरू की, तो पूरा देश एकजुट होकर उनके साथ खड़ा हो गया। इस आंदोलन ने कृषि मंत्री शरद पवार के मंत्रियों के समूह को इस्तीफा देने पर मजबूर कर दिया, जिन पर जन लोकपाल बिल के मसौदे की समीक्षा करने का आरोप लगाया गया था। जन लोकपाल विधेयक, जिसे नागरिक लोकपाल विधेयक भी कहा जाता है, भारत में नागरिक समाज के कार्यकर्ताओं द्वारा तैयार किया गया एक भ्रष्टाचार-विरोधी विधेयक है, जो भ्रष्टाचार के मामलों की जाँच के लिए एक स्वतंत्र निकाय, जन लोकपाल की नियुक्ति की मांग करता है। इस पहल ने बड़ी संख्या में लोगों को एक साथ लाया, जिससे यह दशकों में एक तरह का आयोजन बन गया। यह उन दुर्लभ घटनाओं में से एक था, जिसने यह साबित किया की यदि लोकतंत्र जाग जाए तो क्या कुछ संभव नहीं है।

8.3.9 निर्भया आंदोलन-2012

2012 के दिल्ली गैंग रेप में उन लोगों ने भयंकर प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कीं, जिन्हे लगा कि बस अब बहुत हुआ। इस घटना के बाद, हजारों लोग देश के कई हिस्सों में विरोध के लिए सड़कों पर उतर आए। इस आंदोलन ने सोशल मीडिया में भी हलचल पैदा कर दी जहां लोगों ने अपनी प्रदर्शन तस्वीर को एक ब्लैक डॉट में बदल दिया और लाखों लोगों ने इस घटना का विरोध करते हुए एक याचिका पर हस्ताक्षर किए। आंदोलन को ध्यान में रखते हुए, केंद्र और विभिन्न राज्यों में सरकार ने महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कई कदमों की घोषणा की।

8.4 सारांश

वर्तमान में दुनिया के अधिकांश देशों में लोकतंत्र हैं। सैद्धांतिक रूप से, यह सरकार की अब तक की सबसे अच्छी प्रणाली है। यह सबसे अच्छा है क्योंकि लोग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप

से हर स्तर पर इसमें शामिल होते हैं। इतना ही नहीं, यह ऐसी प्रणाली है, जो लोगों को उनकी प्रगति और विकास के लिए अधिकतम अवसर प्रदान करती है। लोग स्वयं इस प्रणाली में अपने कल्याण का तरीका तय कर सकते हैं। हालाँकि, सैद्धांतिक रूप से सरकार की सबसे अच्छी प्रणाली होने के बावजूद, यदि कोई लोकतांत्रिक राष्ट्रों का बारीकी से अवलोकन करता है, तो पाएगा कि वहां असमान विकास है। बाद में कोई यह पाएगा कि ये देश कमोबेश क्षेत्रीयता के शिकार हैं।

उन्हें भाषा से संबंधित समस्याएं हैं। वे आतंकवाद और सांप्रदायिकता के चंगुल में हैं। इन राष्ट्रों में मानव अधिकारों की उपेक्षा की समस्या भी है। जब तक ये समस्याएं मौजूद हैं, तब तक शांति संभव नहीं है। सभी नागरिकों के पास समान अवसर होने चाहिए और राष्ट्रों में सांप्रदायिक सद्भाव होना चाहिए। लेकिन, वास्तव में, ऐसा नहीं है। गाँधी ऐसे समय में राजनीति और प्रतिरोध की एक वैकल्पिक दृष्टि को प्रेरित करते हैं, जब उत्पीड़न न केवल अधिक और शारीरिक हो रहा था, बल्कि अधिक छद्म भी था। शुरूआत के लिए अहिंसा की उनकी विचारधारा अच्छी है। शायद ये सफल न हो सके, लेकिन यह संभावनाओं की एक पूरी दुनिया खोलता है और हमें कुछ अलग सोचने के लिए प्रोत्साहित करता है। उनका जीवन यह भी दर्शाता है कि कैसे कट्टरपंथी विचारों को पहले खारिज किया जाता है, फिर बाद में उसी का पालन किया जाता है। गाँधी ने युद्धरत और विनाश का तांडव करते दुनिया को दिखाया कि सत्य और अहिंसा का पालन अकेले व्यक्तियों के लिए नहीं है, बल्कि इसे वैश्विक मामलों में भी लागू किया जा सकता है। देश के लिए गाँधी का दृष्टिकोण और एक पूरे समुदाय के लिए उनके सपने भारत के लिए अभी भी अच्छे हैं। उन्हें समुदाय को मानवता के सच्चे मूल्यों को आत्मसात करने और प्रतिबिंबित करने और उन कार्यों में भाग लेने के प्रेरित किया जिससे चारों ओर अच्छाई फैले। ये मुद्दे स्वतंत्र भारत के लिए अभी भी प्रासंगिक हैं। आज की चिंता का मुख्य कारण असहिष्णुता और घृणा है जिससे हिंसा फैलती है इसीलिए गाँधी के मूल्यों को अधिक जुनून के साथ पालन करने की आवश्यकता है। उनके विचार, आदर्श और सिद्धांत हमेशा के लिए प्रासंगिक होंगे।

8.5 अभ्यास प्रश्न

1) गाँधी के अहिंसा के सिद्धांत की व्याख्या करें।

2) अहिंसक आंदोलनों की प्रकृति क्या है?

3) गाँधी के विचारों या अहिंसा की तकनीक ने भारत में समकालीन आंदोलनों को कैसे प्रभावित किया है?

4) टिप्पणी लिखें :

   a) भूदान आंदोलन

   b) नव कृषक आंदोलन

   c) निषेध आंदोलन

8.6 संदर्भ

''9 पावरफुल सिटिज़न्स लेड मूवमेंट्स इन इण्डिया दैट चेंज्ड द नेशन फॉरऐवर'', *द बैटर इण्डियन,* जनवरी 13, 2015 https://www.thebetterindia.com/18248/most-powerful-social-citizens-movements-in-india/ 2009. पृ.10.

असादी, मुगफर, 'खाडी कर्टेन, वीक कैपिटलिज़्म एण्ड ऑप्रेशन र्योट : सम एम्बीगिस्टीज इन फामर्स', डिस्कोर्स, कर्नाटका एण्ड महाराष्ट्र, 1980-83, *द जर्नल ऑफ पीसेंट स्टडीज़,* वॉल्यूम-21, नं.3-4, अप्रैल-जुलाई, 1997, पृ.212.227

भइे, आचार्य, विनोबा, *भूदान गंगा सर्व सेवा संघ,* वाराणसी, 1957-62.

ब्रास, टॉम, (ऐड) *न्यू फामर्ज मूवमेंट्स इण्डिया,* फ्रांकास, लन्दन, 1997

कूक, पी.जे., एण्ड एम.जे. मोरे, टेक्सेशन ऑफ अल्कोहोलिक बिवरेजेज इन एम.ई. हिल्टन, एण्ड जी. ब्लॉस (ऐडज़) इकोनॉमिक्स एण्ड द प्रिवेंशन ऑफ अल्कोहल प्रॉब्लम्स, एन.आई. ए.ए. रिसर्च मोनोग्राफ, नं.25, एनआईएच पब्लिकेशन नं.93-5313. बेथेस्दा, एम.डी. नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ अल्कोहल अब्यूज एण्ड अल्कोहलिज्म, 1993, पृ.33-53

गाँधी, एम.के. ऐडुकेशन, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1996

गाँधी, एम.के. प्रोहिबिशन ऐट ऐनी कॉस्ट, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1960

गोडफ्रे, जे., 'अल्कोहल टैक्सेज : फ्रॉम द व्हिस्की रिबिलियन टू द 1990 बजट सम्मिट', *टैक्स नोट्स,* वॉल्यूम-48, नं.2, 1990, पृ.137

गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया, *एग्रीकल्चरल लेबर इन इण्डिया,* रिपोर्ट ऑन द सेकण्ड इंक्वायरी (1956-67)

ग्रीनफील्ड, लॉरेंस ए., 'ऐन ऐनालाइसिस ऑफ डाटा ऑन द प्रिविलेंस ऑफ अल्कोहल इन्वॉल्वमेंट इन क्राइम', ब्यूरो ऑफ जस्टिस, जनवरी 17, 2009

अय्यर, कृष्णा, 'द स्टेट एण्ड द इविल ऑफ ड्रिंक', *द हिन्दू,* हैदराबाद, जनवरी 12, 2010, पृ.9

जैकद, के.एस., 'अल्कोहल पॉलिटिक्स, पॉलिसीज एण्ड पब्लिक हेल्थ', *द हिन्दू,* चैन्नई, नवम्बर 2

जूडिथ ब्राउन, *गाँधीज राइज टू पॉवर इन इण्डियन पॉलिटिक्स (1915-22),* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी, न्यू देहली, 1972

कुमारप्पा, भारतन, *व्हाय प्रोहिबिशन,* नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1952

कुमारप्पा, जे.सी., *गाँधीयन इकोनॉमिक थौट,* सर्व सेवा संघ, वाराणसी, 1962

मन्तेना, करूणा, 'हाउ इण्डियाज नॉन-वायलेंट रजिस्टेंस बिकेम ए शिफ्टिंग ग्लोबल मूवमेंट', जोकालो पब्लिक स्क्वैयर, *फरवरी 7, 2017* http://www.zocalopublicsquare.org/2017/02/07/indias-nonviolent-resistance-became-shifting-global-movement/ideas/nexus/.

मुजफ्फर असादी, *पॉलिटिक्स ऑफ पीसेंट मूवमेंट इन कर्नाटक,* शिप्रा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1997

नारायण, जयप्रकाश, *स्वराज फॉर द पीपल,* सर्व सेवा संघ, वाराणसी, 1961

ओमवेड्ट, गेल, ''द न्यू पीसेंट, मूवमेंट इन इण्डिया'', *बुलेटिन ऑफ कंसर्नड एशियन स्कॉलरशिप,* वॉल्यूम-29, 1998

पर्नानेन, काई, *द सोशल कॉस्ट ऑफ अल्कोहल-रिलेटेड क्राइम : कॉन्सेप्चुअल, थियोरेटिकल एण्ड कॉसल अट्ट्रीब्यूशन,* नेशनल इंस्टीट्टयूट ऑफ अल्कोहल एण्ड ड्रग स्टडीज, नॉर्वे एण्ड उप्पसाला यूनिवर्सिटी, स्वीडन, 1995

प्रसाद, बिमला, *सोशलिज़्म, सर्वोदया, डेमोक्रेसी,* (ऐड) एशिया पब्लिशिंग हाउस, बॉम्बे, 1965

रानाडाइव, बी.टी., *सर्वोदया एण्ड कम्यूनिज्म,* कम्यूनिस्ट पार्टी पब्लिकेशन, दिलली, 1959

शर्मा, सुनन्दा, 'गाँधीयन स्ट्रेटजी : द इक्सक्लूसिव मन्त्र फॉर सॉल्विंग प्रॉब्लम्स इन मॉडर्न कॉन्टेक्स्ट', एन.डी. https://www.mkgandhi.org/articles/grelevance.htm.

शुघर्ट, विलियम, 'पीसी फैड स्प्रैड्स टू टैक्स पॉलिसी : टैक्स कलेक्टर एण्ड द नैनी स्टेट'' *सोशल गार्जियन,* सितम्बर 29, 1995, पृ.2

सिंह, रिचा, 'न्यू सिटिज़न्ज़ ऐक्टिविज़्म इन इण्डिया', *सेंटर फॉर डेमोक्रेसी एण्ड सोशल एक्शन,* 2014 https://www.boell.de/sites/default/files/study-new-citizens-activism-in-india.pdf.

सिंह, सरदार लाल, *मिनट ऑफ डिसेंट,* गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया रिपोर्ट ऑफ द कमेटीज ऑफ द पैनल ऑन लैण्ड रिफॉर्म. (न्यू देहली : मैनेजर ऑफ पब्लिकेशन्स, मिनिस्ट्री ऑफ लेबर) 1959

श्रीदेवी, सी. ''वोमेन'ज पार्टिसिपेशन इन ऐण्टी-एरैक मूवमेंट इन आंध्रा प्रदेश'' इन वाय. बी. अब्बासयुलु (ऐड) *वोमेन इन डिवलपिंग सोसाइटी,* डेल्टा पब्लिशिंग हाउस, हैदराबाद, 1997, पृ.61-73

सुरेश, राम, *विनोबा एण्ड हिज मिशन,* सर्व सेवा संघ, वाराणसी, 1959

इकाई 9 शांति आंदोलन

संरचना

9.1 प्रस्तावना

लक्ष्य एवं उद्देश्य

9.2 शांतिवाद क्या है?

9.3 संघर्ष समाधान के लिए शांतिवाद

9.4 गाँधी और शांतिवाद

9.5 प्रमुख शांतिवादी

9.6 समसामयिक विश्व में शांतिवाद की प्रासंगिकता

9.7 सारांश

9.8 अभ्यास प्रश्न

9.9 संदर्भ ग्रंथ

9.1 प्रस्तावना

पेसिफिज्म शब्द की उत्पत्ति पैसिफिक शब्द से हुई है जिसका लैटिन में अर्थ शांति स्थापित करना होता है। यह Paci - शांति और ficus - बनाना पर आधारित है। शांतिवाद का मूल उद्देश्य विवादों को शांतिपूर्ण तरीके से और सबसे सौहार्दपूर्ण तरीके से हल करना है। शांतिवाद युद्ध या सैन्य कार्रवाई या बल प्रयोग का विरोध करता है। मूल धारणा यह है कि राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक आवश्यकता को हिंसा का उपयोग करके पूरा नहीं किया जाना चाहिए। यह सरकार या किसी अन्य संगठन द्वारा बल के उपयोग को खारिज करता है। इसके नाम से ही पता चलता है कि यह शांति की स्थापना के लिए है, इसलिए यह स्पष्ट है कि शांतिवाद युद्ध और सैन्य कार्रवाई का विरोध करता है।

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि शांतिवाद की कोई निर्धारित परिभाषा नहीं है। इसकी व्याख्या अलग-अलग लोगों द्वारा अलग-अलग तरीके से की गई है, हालांकि सभी इस बात से सहमत हैं कि यह शांति के लिए है। इसमें ध्यान भीतर और बाहर दोनों तरफ होता है जो व्यक्तिगत स्तर पर है या एक सामाजिक स्तर की ओर है, शांति का अभ्यास करना है अगर हम शांति से रहना चाहते हैं। शांतिवाद के मूल दर्शन, विचारधारा और सिद्धांत धार्मिक शिक्षाओं में अपनी जड़ें तलाशते हैं। शांतिवाद के समर्थकों का मानना है कि यह आदर्श, यदि सभी के द्वारा अभ्यास किया जाता है, तो विश्व शांति और व्यवस्था को बढ़ावा मिलेगा। उनके विश्वास को तब और समर्थन मिला जब महात्मा गाँधी और मार्टिन लूथर किंग जैसे विश्व नेताओं ने इसे दमन से मुक्ति पाने के लिए और दुनिया को एक नई उम्मीद देने की वकालत की। शांतिवाद दुनिया में संघर्ष के समाधान के सबसे प्रभावी साधन के रूप में विद्यमान है।

लक्ष्य एवं उद्देश्य

इस इकाई का मूल उद्देश्य शांतिवाद से संबंधित अवधारणाओं से छात्रों को परिचित कराना है। इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप समझ पाएंगे

डॉ. शैलजा गुल्लापल्ली, रिसर्च एसोशिएट, गांधी स्मृति, 5 तीस जनवरी मार्ग, नई दिल्ली

- शांतिवाद क्या है और यह क्यों आवश्यक है
- सैन्य कार्रवाई और हिंसा की अक्षमता
- शांतिवाद पर गाँधी की सहमति और
- प्रमुख लोग जिन्होंने शांतिवाद से विश्व शांति की वकालत की

9.2 शांतिवाद क्या है?

शांतिवाद को इस विश्वास के रूप में वर्णित किया जाता है कि युद्ध या कोई भी हिंसा किसी भी परिस्थिति में अनुचित है, और यह कि सभी विवादों को शांतिपूर्ण तरीकों से सुलझाया जाना चाहिए। यह उन सभी पर लागू होता है जो युद्ध के विरोध में हैं। शांतिवाद को मोटे तौर पर उन व्यक्तियों को शामिल करने के लिए भी परिभाषित किया गया है, जिन्होंने युद्ध के मैदानों में चल रहे कत्लेआम के लिए दृढ़ता से संवेदना व्यक्त की और सैन्य समाधानों का विरोध किया, शांतिवाद की वकालत में शामिल थे, जिसमें अहिंसक कार्य (याचिकाएं, बैठकें) शामिल थे, संघर्ष, और स्थायी शांति के लिए बातचीत के सिद्धांत की तलाश। ऐसे कार्यकर्ता आमतौर पर शांतिवादी या अर्ध-शांतिवादी समूहों (डेविड पैटरसन, पृष्ठ 2) के माध्यम से अपने विचारों और कार्यक्रमों का अनुसरण करते थे।

शांति प्राप्त करने के लिए, जिन आवश्यक सद्गुणों का अभ्यास करने की आवश्यकता होती है, उनमें सहिष्णुता, सद्भाव और प्रेम शामिल हैं। जैसा कि पहले बताया गया है, शांतिवाद शांति के लिए युद्ध को एक साधन के रूप में खारिज करता है। जैसा कि द किंग्डम ऑफ गॉड इज विदिन यू में काउंट लियो टॉल्स्टॉय ने कहा है कि आपके ग्रंथ में शांतिवाद का अर्थ, इतिहास और उद्देश्य व्यापक रूप से दिया गया है। शांतिवाद उन गुणों को विकसित करने में मदद करता है जो प्रकृति में अहिंसक हैं और जो युद्ध के बिना शांति और व्यवस्था में बहुत योगदान करते हैं। लियो टॉल्स्टॉय से प्रेरित शांतिवाद के सिद्धांतों का महात्मा गाँधी के दिमाग पर बहुत प्रभाव पड़ा। उनके लिए, यह युद्ध का विरोध करने के लिए एक प्रभावी उपकरण था। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में आप्रवासी अधिकारों के लिए अपने संघर्ष के दौरान इसका अनुसरण किया। गाँधी ने टॉलस्टॉय के साथ संवाद किया और इन दो महापुरुषों ने विचार और कर्म में अहिंसा के विरासत को आगे बढ़ाया। उन्होंने नेल्सन मंडेला के समय में और मार्टिन लूथर किंग के नेतृत्व में अमेरिका में नागरिक अधिकार आंदोलन के दौरान दक्षिण अफ्रीका में भविष्य के मानव अधिकारों के संघर्ष की नींव रखी। हिंसा की अस्वीकृति के माध्यम से आत्म-निर्णय के प्रति उत्पीड़न और आंदोलन के लिए एक अहिंसक प्रतिरोध ने दुनिया का ध्यान आकर्षित किया।

विश्व युद्ध-I के पहले ही तनाव और शांति को कम करने का विचार मौजूद था। यूनिवर्सल पीस कांग्रेस में भाग लेने वाले सभी लोगों ने शांति और व्यवस्था की प्रभावकारिता को पूरी तरह से जाना। एक अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली के क्रमिक उद्भव और लगातार संकटों और युद्धों ने राष्ट्रों के बीच अनसुलझे तनावों को जन्म दिया। शांति को बढ़ावा देने के लिए वर्ष 1889 को शांतिवादियों के समूह की शुरुआत कहा जाता है। यूरोप इस तरह की अधिकांश बैठकों का केंद्र बन गया। युद्ध के प्रतिरोध ने गति पकड़ी लेकिन इससे शांति का प्रचार करने वाले विभिन्न समूहों का उदय भी हुआ, हालांकि वे मूल रूप से शांतिवादी नहीं थे। इसलिए, इन समूहों का समर्थन संबंधित राष्ट्रों के अनुसार भी भिन्न था। एक और समस्या राष्ट्रवाद का तत्व थी जिसमें कुछ सदस्यों ने विभिन्न कारणों से अपने देशों के आक्रामक होने का समर्थन किया। समान कोड की अनुपस्थिति और विशिष्ट उद्देश्य ज्यादातर राष्ट्रवादी कारकों के अनुसार ढाला गया था। उदाहरण के लिए, फ्रांस, इटली और जर्मनी के एक्टिविस्टों और

उनके अपने राष्ट्रों की पूर्वाग्रही नीतियों का समर्थन करने के अपने कारण थे। इसलिए, शांति सक्रियता ने प्रचलित समय की आवश्यकता के अनुसार अलग-अलग रूप लिए। शांति कार्यकर्ताओं और शांतिवादियों की गतिविधियां कमोबेश उपेक्षित थीं और इसे अंतरराष्ट्रीय बनाने के प्रयासों के सकारात्मक परिणाम नहीं मिले।

बहरहाल, यह सोचना गलत होगा कि शांतिवादियों ने गंभीर प्रयास नहीं किए। जब युद्ध स्पष्ट था और राष्ट्र विनाश के लिए तैयार हो रहे थे, उन्होंने शांति के पैरोकार के रूप में बात की। वे कुछ राष्ट्रों के प्रमुखों से भी युद्ध के लिए शांति बनाए रखने में सक्षम थे, लेकिन उनकी अपील का कोई असर या प्रभाव नहीं हुआ। उनके प्रयासों की विफलता के बावजूद शांतिवादियों ने लोकप्रियता हासिल की और शत्रुतापूर्ण युद्ध के माहौल में शांति की वकालत करने के उनके साहस की सराहना की गई। युद्ध के दौरान शांतिवादियों का ध्यान दुनिया के भविष्य पर केंद्रित था और यह कि युद्ध के बाद के माहौल में शांति कैसे बनाई जा सकती है। धीरे-धीरे यूरोप और संयुक्त राज्य अमेरिका में शांतिवाद को गति मिली युद्धों के डर के बीच, उन्होंने शांति का लगातार प्रचार किया और वे एक शांतिपूर्ण अंतरराष्ट्रीय विश्व व्यवस्था के बारे में अनंत रूप से आशावादी थे।

शांतिवादी विभिन्न प्रकार के होते हैं :

- पूर्ण शांतिवादी हिंसा के बिल्कुल खिलाफ होते हैं जो आत्मरक्षा के लिए भी दूसरों को मारने से इनकार करते हैं।
- सशर्त शांतिवादी आमतौर पर युद्ध का विरोध करते हैं, लेकिन इसका समर्थन तब करते हैं जब उनके अपने राष्ट्र की सुरक्षा दांव पर होती है, इसलिए सैन्य रक्षा को आवश्यक बताते हैं।
- चयनात्मक शांतिवादी तय करते हैं कि एक सैन्य युद्ध उचित है या आवश्यक है। वे अपने देश के लिए लड़ने से भी इनकार कर देते हैं अगर उनका देश अन्यायपूर्ण युद्ध में उतर जाता है या दूसरों पर हमला कर देता है।

9.3 संघर्ष समाधान के लिए शांतिवाद

पॉल बोहानन ने एक बार कहा था कि "संघर्ष के बिना समाज असंभव है। लेकिन संघर्ष के नियंत्रण के बिना समाज उससे भी बुरा है" (पॉल बोहानोन (संपा), लॉ एंड वेलफेयर : स्टडीज इन द एन्थ्रोपोलोजी ऑफ कनफ्लिक्ट (न्यूयॉर्क, 1967), पेज xxi)। संघर्ष हमारी रोजमर्रा की जिंदगी का हिस्सा है। गाँधी के संघर्ष का दृष्टिकोण और इसे व्यक्त करने का तरीका उनकी सबसे महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि में से एक है। उनकी व्याख्या के अनुसार, गीता मानती है कि प्रत्येक व्यक्ति में सत्य और असत्य दोनों साथ होता है। गाँधी ने कहा कि युद्धक्षेत्र हमारे अपने शरीर में है। साहित्य में अंतरराष्ट्रीय संघर्षों/ गृह युद्धों या युद्धों के अर्थ की पूरी तरह से अलग समझा जाता है। अंतरराष्ट्रीय संबंधों के क्षेत्र में एक शब्द के रूप में संघर्ष की सटीक धारणा पर असहमति आज तक हावी है।

कुल मिलाकर, टकराव पारस्परिक, अंतर-व्यक्तिगत होता है जिसमें देश, व्यक्ति, समूह आदि शामिल होते हैं। प्रत्येक संघर्ष तीव्रता, धारणा, समाधान करने के इरादे और संघर्ष को सुलझाने के लिए की गई पहल के हिसाब से भिन्न होता है। आज हमारे पास कई संघर्ष समाधान उपकरण हैं जो संघर्ष की पहचान और विश्लेषण करने में मदद करते हैं। हमारे पास उत्साही व्यक्ति और संगठन भी हैं जो विभिन्न पक्षों के बीच संघर्षों को हल करने में रुचि रखते हैं। इसलिए संघर्ष के अस्तित्व का मतलब यह नहीं है कि संघर्ष पूर्ण युद्ध में बदल ही जाएगा।

प्रथम और द्वितीय विश्व युद्धों से पहले की दुनिया पूरी तरह से एक अलग तस्वीर प्रस्तुत करती है। राष्ट्रीय क्षेत्र का विस्तार करने के लिए संघर्ष, आकांक्षाओं और महत्वाकांक्षाओं का टकराव था। यह निश्चित रूप से उन राष्ट्रों के बीच रुक-रुक कर संघर्ष का दौर था जो यथार्थ को मूल मानते थे। यह शांतिवाद उस दौरान एक व्यवहार्य विकल्प के रूप में उभरा, जो कि कोई साधारण उपलब्धि नहीं थी और संघर्षों को सुलझाने के लिए उसके पैरोकारों की भूमिका सराहनीय थी। क्वेकर, धार्मिक शांतिवादी और पूर्ण शांतिवादी थे जिन्होंने बड़े पैमाने पर शांति की पहल में योगदान दिया।

9.4 गाँधी और शांतिवाद

युद्ध परंपरा के विपरीत शांतिवाद शांति प्राप्त करने के लिए युद्ध को एक स्वीकार्य साधन के रूप में खारिज करता है। शांतिवाद किसी के व्यक्तिगत जीवन में अहिंसा के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता है जिसमें सहिष्णुता, धैर्य, दया, क्षमा और प्रेम जैसे प्रशांत गुणों के सृजन का प्रयास शामिल हो सकता है। गाँधी भारतीय संदर्भ में शांतिवाद के गुणों की व्याख्या करने वाले पहले व्यक्ति थे। अहिंसा पर उनके विचार जैन परंपराओं के उनके अवलोकन और सत्य के सिद्धांतों पर उनकी अत्यधिक निर्भरता से निकलते हैं। गाँधी की तरह, अहिंसक कार्रवाई के समर्थकों का मानना है कि अहिंसा अधिक सफल हो सकती है यदि समाज ने अपने संसाधनों को नागरिकों को अहिंसक संघर्ष के लिए तैयार करने और अहिंसक कार्रवाई को सिंक्रनाइज करने पर केंद्रित किया हो। अहिंसा के उपकरण के रूप में शांतिवाद पर गाँधी के विचारों में कुछ झलकियाँ हमें उनके दर्शन को समझाएंगी।

- गाँधी राष्ट्रों और समाजों के बीच सद्भावना के पैरोकार थे। वह नैतिक श्रेष्ठता में विश्वास करते थे जो राज्यों के साथ-साथ संबंधित पक्षों के स्तर पर विवादों को निपटाने के लिए व्यक्तियों पर एक नैतिक जिम्मेदारी डालता है।

- गाँधी ने युद्ध को खत्म करने और विश्व शांति स्थापित करने और उसे बढ़ावा देने की पैरवी की। गाँधी ने महसूस किया कि शांति स्थापित करने के लिए काम करने के कुछ तरीकों और संस्थानों का उपयोग करने या विकसित करने के लिए राजनेताओं और देशों द्वारा इसे बेहतर तरीके से अपनाया जा सकता है। कुछ तरीकों में थर्ड पार्टी सेटलमेंट वैश्विक सरकार निरस्त्रीकरण और एक विशाल अंतरराष्ट्रीय संगठन के स्थान पर एक अंतरराष्ट्रीय पुलिस बल भी शामिल है।

- गाँधी ने सत्याग्रह की सिफारिश सैन्य बल के छद्म के रूप में की, जो अहिंसा की उनकी अपनी पद्धति थी। उन्होंने सर्वमान्य कानून के रूप में सत्याग्रह का दावा किया और यहां तक कि यह धुर विरोधियों के दिल और दिमाग को भी बदलने में सहायक हो सकता है।

- गाँधी को एक संप्रभु भारत से उम्मीद थी कि वह दुनिया में एक शांतिप्रिय कार्य करेगा जो देश की विरासत और ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ उसके अहिंसक संघर्ष का उदाहरण होगा। गाँधी की धारणाएं उन प्राचीन हिंदू विचारों का स्पष्ट रूप से खंडन करती हैं, जो भारत के बाहरी संबंधों, विशेषकर कौटिल्य और कामांदका से जुड़े लोगों के आधार के रूप में सामंजस्य और शक्ति के संतुलन पर जोर देते हैं। बहरहाल, गाँधी ने भारतीय नीति निर्माताओं को कुछ व्यावहारिक सलाह के साथ-साथ विश्व मामलों के लिए एक नैतिक दृष्टिकोण के लिए छोड़ दिया। उनके विचारों में आदर्शवाद की भी झलक मिलती है (गाँधी ऑन पैसिफिज्म, इग्नू प्रकाशन)।

- गाँधी ने विरोधियों को उनके गलत कामों के लिए क्षमा करने में विश्वास किया। प्रतिद्वंद्वी को माफ करने की यह क्षमता नैतिक रूप से श्रेष्ठ व्यक्ति का निर्माण करेगी। चूंकि समाज अपने सभी व्यक्तियों का योग है, इसलिए क्षमा का यह गुण लोगों और राष्ट्रों के बीच शांति और सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए संक्रामक रूप से फैल सकता है।

गाँधी का योग्य शांतिवाद गतिशील अहिंसा के उनके विश्वास और अंतिम सत्य को खोजने के उनके प्रयास से लिया गया है। उनका यह तर्क कि सत्य और अहिंसा उतने ही पुराने हैं, जितने पहाड़, हमें अहिंसक रणनीति और कार्रवाई पर उनकी असम्बद्ध स्थिति की झलक दिखलाता है। सत्य को प्राप्त करने के लिए दृष्टिकोण भी सत्य होना चाहिए। प्रेम और न्याय की उनकी नैतिकता परस्पर जुड़ी हुई हैं। गाँधी के शांतिवाद को युद्ध से घृणा पर उनके शब्दों और सैन्य प्रस्तावकों से युद्ध की मांग करने के बजाय शांति की तलाश करने की उनकी दलीलों को सबसे अच्छा समझा जा सकता है। गाँधी ने कहा कि एक निहत्थे देश के निवासी के रूप में जिसे प्रतिरोध की भावना की आवश्यकता थी, वह स्वतंत्र भारत में सैन्य प्रशिक्षण के लिए मतदान करेगा। उन्होंने अपने नीति निर्माताओं के सैन्य कार्यों के लिए करों का भुगतान करने वाले लोगों की अवधारणा को नापसंद किया। उन्होंने उसी की अस्वीकृति का आह्वान किया और शांतिवाद को बेहतर विकल्प बताया।

गाँधी ने किसी देश में बाहरी लोगों द्वारा शासन को न्यायोचित नहीं समझा। उनके अनुसार सैन्य कार्रवाई के माध्यम से असहाय और निर्दोष जनता को प्रताड़ित करने और शासन करने की प्यास सबसे बुरे प्रकार के नियमों में से एक था। उन्होंने शांति आंदोलन के समर्थकों को दूर-दूर तक स्पष्ट कर दिया कि युद्ध के दौरान बौद्धिक निष्पक्षता अपरिभाषित होती है क्योंकि परिस्थितियों के कारण कोई भी व्यक्ति झुक जाता है। गाँधी ने शांतिवादियों से कहा कि एक सैन्य प्रतियोगिता को खारिज कर दिया जाना चाहिए। फिर भी, वे आश्वस्त थे कि फ्रैंको से लड़ रहे स्पेनिश रिपब्लिकन, जापान के खिलाफ संघर्ष करने वाले चीनी और जर्मनी का विरोध करने वाले पोलैंड के लोग काफी निष्पक्ष हैं, हालांकि वह हिंसक रक्षा के तरीकों के खिलाफ थे। गाँधी ने पाया कि न्याय हमेशा एक पक्ष के साथ संघर्ष पर टिका होता है हालांकि सैन्य कार्रवाई बहुत ही निराशाजनक है, उन्होंने कहा कि इस तरह की स्थिति से कुछ अच्छा हो सकता है।

अयोग्य शांतिवाद, सशर्त शांतिवाद और देशभक्त यथार्थवाद के बीच युद्ध के बारे में गाँधी के विचार एक से थे। एक अयोग्य शांतिवादी के रूप में, गाँधी का मानना था कि सैन्य संघर्ष से कुछ भी बेहतर हासिल नहीं होता है। यह विचार 1909-1914 की अवधि यानि प्रथम विश्व युद्ध के तुरंत बाद और द्वितीय विश्व युद्ध के शुरुआती वर्षों के दौरान पश्चिमी लोकतंत्रों के बारे में उनकी टिप्पणियों में पाया जा सकता है। इसे परमाणु युद्ध की निंदा के रूप में भी देखा जा सकता है। एक पूर्ण शांतिवादी के रूप में, वह अपने सामान्य सुझाव की तुलना में अधिक उपयोगी हैं (गाँधी ऑन पैसिफिज्म)।

गाँधी का मानना था कि प्रथम और द्वितीय विश्व युद्धों के बाद शांति के प्रयास सिर्फ दिखावा थे। प्रथम विश्व युद्ध के बाद, मित्र राष्ट्र जर्मनी की तरह ही कुटिल और दुर्भावनापूर्ण थे। उनकी गुप्त संधियाँ और सैन्य गवाही इस बात का प्रमाण थीं और वे गरिमापूर्ण स्थिति से मेल नहीं खाती थीं कि वे ऐसे हों जो गलत काम करने वालों को क्षमा कर सके। इससे अंततः गड़बड़ी हुई और अंत में विचारधाराओं में अंतर के कारण फिर से दुनिया को अनजाने में दूसरे युद्ध में झोंक दिया जो कि अधिक विनाशकारी था। द्वितीय विश्व युद्ध शुरू होने के बाद, उन्होंने आत्मनिरीक्षण पर कहा कि वर्साई के शांति निर्माताओं ने जर्मनी के साथ अपने गैर-शांतिपूर्ण दृष्टिकोण से न्याय नहीं किया है। इसके अलावा, वुड्रो विल्सन के चौदह

अंक वाली उसकी तथाकथित शांति पहल के लिए परोक्ष रूप से युद्ध और हिंसा बढ़ाने का प्रयास था। 1939 में अपनी पीड़ा व्यक्त करते हुए, जब संबंधित पक्षों के बीच युद्ध छिड़ गया, तो उन्होंने कहा, "आखिरकार, यदि तथाकथित लोकतंत्र की जीत होती है तो क्या लाभ होगा? युद्ध निश्चित रूप से समाप्त नहीं होगा। लोकतंत्र ने फासीवादियों और नाजियों की सभी चालों को अपनाया होगा, जिसमें आज्ञाकारिता और सटीक आज्ञाकारिता के लिए सहमति और अन्य सभी जबरन तरीके शामिल हैं। जीत के अंत में प्राप्त होने वाली सभी व्यक्तिगत स्वतंत्रता की तुलनात्मक सुरक्षा की संभावना है।"

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान 'रॉयडन अफेयर' गाँधी के बिना शर्त वाली शांतिवाद का उत्कृष्ट चित्रण करता है। एक ब्रिटिश शांतिवादी, मुड रॉयडन ने 1941 में देर से फैसला किया कि अहिंसा के लिए उनकी क्षमता उन परिस्थितियों के लिए पर्याप्त नहीं थी, जिनमें उन्होंने खुद को पाया था। ईसा मसीह के विचार की उसकी व्याख्या के बाद, उसने युद्ध का समर्थन करने का फैसला किया, जिसे वह प्रभावी रूप से कम नहीं कर सकती थी। जब गाँधी को अपने फैसले का पता चला, तो उन्होंने उनकी नई स्थिति की आलोचना की और उन्हें पश्चाताप करने और अपने पूर्व के अयोग्य होने पर वापस लौटने के लिए कहा। ऐसा नहीं लगता है कि गाँधी समझ रहे थे कि सख्त शांतिवाद को मानने की उनकी व्यक्तिगत अक्षमता एक शर्त थी, जिसे उन्होंने 1920 में प्रथम विश्व युद्ध में ब्रिटेन के उद्देश्य के समर्थन के लिए उनके स्पष्टीकरण के रूप में स्वीकार किया था।

यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान गाँधी द्वारा शांतिवाद के रुख में कुछ बदलाव किए गए थे। उन्होंने लोकतंत्र के साथ एक संधि की शर्तों के तहत जापान के खिलाफ संचालन के लिए एक रक्षा थियेटर की अनुमति दी। भारत-बर्मा सीमा की रक्षा एक आवश्यक कार्रवाई बन गई और उन्होंने इस पर कोई आपत्ति नहीं जताई। यह कहना गलत नहीं होगा कि जहां आवश्यक हो उन्होंने सैन्य कार्रवाई की वकालत की उन्होंने महसूस किया कि संघर्ष को निपटाने में अहिंसा अधिक अच्छी भूमिका निभा सकती है। इस संदर्भ में, गाँधी देशभक्ति की भावना से प्रेरित थे। वास्तव में, युद्ध के समय में, दुनिया के विभिन्न हिस्सों में शांतिवादियों ने अपने राष्ट्रों के प्रति अपनी वफादारी दिखाई और शांतिवादी धारणाओं को दूर रखा, हालांकि उन्होंने शांति और शांतिपूर्ण समझौतों पर लिखना और समर्थन करना जारी रखा। शायद यह युद्ध के दौरान शांतिवादियों की बदलती विचारधाराओं में से एक है। गाँधी की तरह, वे भी अपने-अपने राष्ट्रों को आक्रामकता के हमले से बचाने और परिस्थितियों के अनुसार सैन्य कार्रवाई करने के बीच विभाजित थे। वे युद्ध की आलोचना करते थे जिससे हिंसा फैलती थी। परमाणु बम के इस्तेमाल पर भी वह बेहद व्यथित थे और इसकी भयावह कार्रवाई के रूप में निंदा की। उन्होंने कहा कि युद्ध अपराधियों को सुधारकर उन्हें शांति दूत बनाया जाना चाहिए युद्ध अपराधी केवल राष्ट्र तक ही सीमित नहीं थे। उन्होंने कहा कि रूजवेल्ट और चर्चिल युद्ध के लिए समान रूप से जिम्मेदार हैं और केवल फासिस्ट नेताओं हिटलर और मुसोलिनी को दोषी ठहराना सही नहीं है। उन्होंने युद्ध के दौरान विरोधियों के अपमान पर व्यथा व्यक्त की।

युद्ध के समय में शांति कायम नहीं की जा सकती। जैसा कि गाँधी युद्ध के विरोध की घोषणा करते रहे, पर कम संख्या में ही सही, उस दौरान शांति प्रयास भी किए जा रहे थे। डेविड पैटरसन द्वारा दिए गए विवरण से एक उदाहरण का हवाला दिया जा रहा है : "जैसा कि युद्ध का अंत स्पष्ट नहीं दिख रहा था, हालांकि, युद्ध के उद्देश्यों और राष्ट्र की शांति के बारे में चिंताएं सामने आईं। 1914 में, बर्लिन में एक नए समूह, बुंड नेयस वाटरलैंड (न्यू फादरलैंड लीग) की स्थापना की गई। बुद्धिजीवियों, उदारवादियों, समाजवादियों और शांतिवादियों से मिलकर, सुधारक-विचार वाले राजनयिकों, कुलीनों और व्यापारियों से सहानुभूतिपूर्ण समर्थन के साथ, लीग ने एक अंतर्राष्ट्रीयतावादी कार्यक्रम स्थापित किया।

यह समझौते से शांति की उम्मीद करता था, लेकिन इसके सदस्य अल्ट्रा-नेशनलिस्ट्स एनेक्सेशनिस्ट युद्ध के लक्ष्य के विरोध में ज्यादातर एकजुट थे। हालांकि केवल कुछ सौ सदस्यों को शामिल करते हुए, समूह ने कई पैम्फलेट प्रकाशित करने और प्रसारित करने में कामयाबी हासिल की, जो इसके अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम को व्यक्त करता है "(डेविड पैटरसन, पेज 8)।

गाँधी युद्ध और उसके विनाश के विरोध में थे। उन्होंने कहा कि इससे किसी का फायदा नहीं होता; इसके बजाय यह उन लोगों के लिए गंभीर परिणाम है, जिन्होंने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से इसमें भाग लिया, जिससे लोगों का, वित्त और संसाधनों के मामले में नुकसान हुआ। उन्होंने यह भी सवाल किया कि क्यों कुछ लोगों को यह तय करना चाहिए कि हमलावर कौन है और पीड़ित कौन है। वे सभी एक ही सांचे के थे, जैसा कि उन्होंने युद्ध में भाग लिया था। उन्हें इस बात की पीड़ा थी कि राष्ट्रों ने शांतिपूर्वक संघर्षों को सुलझाने के बजाय, युद्ध का सहारा लिया और दुनिया भर में शांतिप्रिय लोगों द्वारा किए जा रहे सभी प्रयासों को पीछे छोड़ दिया। इस प्रकार गाँधी के शांतिवाद ने उनके आदर्शवाद और देशभक्ति के सिद्धांतों के बीच दोलन किया। लेकिन हमें यह याद रखने की जरूरत है कि अहिंसा के प्रति यह उनका अद्‌भुत योगदान है जिसने कई नेताओं को बिना खून बहाए भविष्य में खुद को आजाद करने के लिए शांतिपूर्ण तरीके अपनाने के लिए प्रेरित किया।

9.5 प्रमुख शांतिवादी

लियो टॉल्स्टॉय (1828-1910)

19 वीं शताब्दी के शांतिवादियों में, काउंट लियो टॉल्स्टॉय का नाम अग्रणी है। रूसी लेखक और दार्शनिक, वह क्रीमिया के युद्ध में लड़े लेकिन एक ईसाई शांतिवादी बन गए। उनके लेखन से महात्मा गाँधी बहुत प्रभावित थे और कई मौकों पर उनसे संवाद भी किया। गाँधी उन्हें अपना आध्यात्मिक मार्गदर्शक और गुरु मानते थे।

अल्बर्ट आइंस्टीन (1879-1955)

अल्बर्ट आइंस्टीन एक महान प्रतिभाशाली वैज्ञानिक होने के साथ ही एक महान शांतिवादी भी थे। उन्होंने हिंसा और युद्ध को खत्म करने और शांति की स्थापना की वकालत की। वह गाँधी के अहिंसा और सत्य के सिद्धांतों के प्रशंसक थे और उन्हें इस धरती पर सबसे महान मानवों में से एक माना जाता है। आइंस्टीन ने खुले तौर पर घोषणा की कि वह एक शांतिवादी के रूप में अपनी स्थिति का दावा करते हुए वे एक उग्र शांतिवादी थे। उन्होंने कहा कि लोगों को युद्ध से मना करना चाहिए और उसके बाद ही युद्ध समाप्त होगा।

एमिले अर्नौड (1864-1921)

अहिंसक संघर्ष समाधान के समर्थक, उन्होंने 19 वीं शताब्दी में शांतिवाद शब्द के उपयोग का प्रस्ताव रखा। वह न्याय, मानवता, सद्‌भाव और एक दूसरे के प्रति सहिष्णुता पर अपने विचारों के लिए जाने जाते थे।

बर्टरैंड रसेल (1872-1970)

युद्ध के कट्टर विरोधी, रसेल ने दूसरों के खिलाफ सैन्य कार्रवाई के खिलाफ अभियान चलाया। उन्होंने परमाणु निरस्त्रीकरण की वकालत की और प्रथम विश्व युद्ध में अमेरिका के प्रवेश के बारे में अपने विचार व्यक्त करने के लिए जेल भी गए। एक समर्पित शांतिवादी, उन्होंने शांति और इसकी उपयोगिता पर विस्तार से लिखा।

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ (1856-1950)

एक श्रेष्ठ नाटककार, उन्होंने संघर्षों को सुलझाने के लिए शांतिवाद का सबसे प्रभावी तरीके से बचाव किया और उसकी वकालत की। उन्होंने अक्सर शांति की बात करने के लिए सर्मन ऑन द माउंट का उद्धरण दिया।

मार्टिन लूथर किंग जूनियर (1929-1968)

एक प्रतिष्ठित नेता जिन्होंने अमेरिकी नागरिक अधिकार आंदोलन का नेतृत्व किया, किंग जूनियर, महात्मा गाँधी के विचारों के कट्टर अनुयायी थे, जिन्होंने अहिंसक सिद्धांतों को छोड़ने से इनकार कर दिया। शांति और सहिष्णुता के लिए उनकी दृढ़ता ने उन्हें अहिंसक आंदोलनों के सबसे सम्मानित नेताओं में से एक बना दिया।

एल्डस हक्सले (1894-1963)

लेखक और शांतिवादी, हक्सले का प्रसिद्ध कार्य ब्रेव न्यू वर्ल्ड था। वह युद्ध के विरोधी थे और अहिंसा के कट्टर समर्थक थे। यहां तक कि उनकी अमेरिकी नागरिकता भी खारिज कर दी गई क्योंकि उन्होंने आवश्यक होने पर इसका बचाव करने के लिए हथियार उठाने से इनकार कर दिया था। वह युद्ध विरोधी थे और उसके निंदक भी थे।

सोफी स्कॉल (1921-1943)

एक युवा छात्रा, वह युद्ध की धुर विरोधी थी और जनता के बीच जागरूकता पैदा करने के लिए युद्ध-विरोधी पत्रक के वितरण में भाग लेती थी। उसने जर्मनी की नाजी विचारधारा का विरोध किया। 1943 में राजद्रोह की गतिविधियों में भाग लेने के कारण उसे मृत्यु दंड दिया गया। वह नाजी नेताओं के खिलाफ अपने जीवन के अंतिम क्षण तक मुखर रहीं।

हेलेन केलर (1880-1968)

राजनीतिक कार्यकर्ता, लेखक और व्याख्याता, हेलेन केलर ने सैन्य-विरोधी रुख अपनाया। वह महिलाओं के अधिकारों की रक्षक थी और उन कारणों का भी समर्थन करती थी जो राष्ट्रों के सैन्य हस्तक्षेप का विरोध करते थे।

वेरा ब्रिटेन (1893-1970)

वह एक शांति कार्यकर्ता और लेखिका थीं और द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान, उन्होंने लेटर्स टू पीसलवर्स नामक पत्र के माध्यम से लोगों को संबोधित करना शुरू किया। वह एक शांतिवादी थीं, क्योंकि उन्होंने फायर वार्डन के रूप में काम करके युद्ध में मदद की और पीस प्लेज यूनियन के भोजन राहत अभियान के लिए धन जुटाने के लिए व्यापक रूप से यात्रा की। उन्होंने रंगभेद, उपनिवेशवाद के खिलाफ लेख लिखे और परमाणु निरस्त्रीकरण का आह्वान किया।

9.6 समसामयिक विश्व में शांतिवाद की प्रासंगिकता

शांतिवाद शब्द आज प्रयोग में एक सामान्य शब्द नहीं है। आमतौर पर हम परमाणु निरस्त्रीकरण, युद्ध-विरोधी अभियान और संघर्ष समाधान आदि की बातें सुनते हैं। कई सिद्धांतकार संघर्ष के समाधान के तरीकों की वकालत करते आए हैं कि हम इस दुनिया को रहने के लिए बेहतर जगह कैसे बना सकते हैं। क्या इसका मतलब शांतिवाद अपनी प्रासंगिकता खो चुका है? क्या इस अमूल्य अवधारणा के लिए कोई प्रस्तावक नहीं हैं? हमारा जवाब नकारात्मक ही होगा। एक शब्द के रूप में शांतिवाद का उपयोग भले ही न हो

लेकिन इसकी प्रासंगिकता युद्ध के सबसे व्यवहार्य विकल्प के रूप में है। यह विचारधारा युद्ध के विरोध में है। इसकी प्रासंगिकता फीकी नहीं हुई है इसके बजाय आज दुनिया की समस्याएं कई गुना बढ़ गई हैं। हमारे पास युद्ध के लिए विभिन्न कारण हैं हमारे पास शांति प्राप्त करने और स्थापित करने का कारण भी युद्ध है। इस संघर्ष की दुनिया में, शांतिवाद दुनिया के विभिन्न हिस्सों में अलग-अलग नाम से एक प्रासंगिक विकल्प के रूप में खड़ा है। यूरोपीय देशों में शांतिवाद अच्छी तरह से निहित था। बाद में, इसने महात्मा गाँधी जैसे प्रतिष्ठित नेता और दुनिया भर के प्रमुख नेताओं की टोली से समर्थन पाया।

9.7 सारांश

इस इकाई में, हमने शांतिवाद की उत्पत्ति और उदय का एक अवधारणा के रूप में अध्ययन किया है और यह कि युद्ध के वर्षों के दौरान और उसके बाद यह कैसे प्रमुखता में आया। हमने विभिन्न प्रकार के शांतिवाद और इनके मुख्य उद्देश्य को समझा। दुनिया के सबसे प्रमुख नेताओं में से एक, महात्मा गाँधी ने शांतिवाद की वकालत की और उसी के समर्थन में आवाज उठाई। उनका सत्याग्रह या अहिंसक बल भी इसी अवधारणा से प्रभावित है। 19वीं और 20वीं शताब्दी के कुछ विद्वान लोगों ने शांतिवादी विचारधारा के लिए और युद्धों का विरोध करते हुए और यहां तक कि अपनी सरकारों के विरुद्ध जाकर भी अपना समर्थन दिया। फिर भी, शांतिवादी विचारधारा और युद्ध-विरोधी रुख, शांति और सद्भाव के कार्यकर्ताओं को प्रेरित करते रहते हैं। यह बात लेखकों, कलाकारों, कार्यकर्ताओं और नीति निर्माताओं के वक्तव्यों में आती रहती है और वे समकालीन दुनिया में भी इसकी प्रासंगिकता के बारे में बात करते हैं।

9.8 अभ्यास प्रश्न

1) शांतिवाद की अवधारणा से आप क्या समझते हैं? यह संघर्ष संकल्प के लिए क्यों महत्वपूर्ण है?

2) महात्मा गांधी एक कट्टर शांतिवादी और अहिंसा के पैरोकार थे। चर्चा करें।

3) दुनिया भर के शांतिवादियों के योगदान पर एक संक्षिप्त नोट लिखें।

9.9 संदर्भ ग्रंथ

शार्प, जीनी, द मैथड्स ऑफ नॉन-वायलेंट ऐक्शन, पोर्टर सर्जेन्ट पब्लिशर्स, बोस्टन, 2005

शार्प, जीनी, वेजिंग नोन-वायलेंट स्ट्रगल : 20st सेंचुरी प्रैक्टिस एण्ड 21st सेंजुरी पोटेंशियल, पोर्टर सर्जेन्ट पब्लिशर्स, बोस्टन, 2005

गाँधी ऑफन पेसिफिज़्म, (आई.जी.एन.ओ.यू. पब्लिकेशन ऑन द कोर्स पोलिटिकल थौट)

डेविड एस. पैटर्सन, पेसिफिज़्म, इण्टरनेशनल इंसाइक्लोपीडिया ऑफ द फर्स्ट वर्ल्ड वार (ऑनलाईन ऐडिशन, लास्ट अपडेटेड 8 अक्टूबर, 2014)

इकाई 10 महिला आंदोलन

संरचना

10.1 प्रस्तावना

लक्ष्य और उद्देश्य

10.2 महिलाओँ के बारे में गाँधी का दृष्टिकोण

10.3 महिला आंदोलनों की प्रकृति

10.4 भारत में महिला आंदोलन

10.4.1 चिपको आंदोलन

10.4.2 नर्मदा बचाओ आंदोलन

10.4.3 दहेज विरोधी आंदोलन

10.4.4 निषेध आंदोलन : आंध्र प्रदेश में अरक/शराब विरोधी आंदोलन

10.4.5 खाप पंचायत के खिलाफ आंदोलन

10.4.6 गुलाबी गैंग

10.4.7 मणिपुर में अफस्पा (एएफएसपीए) के खिलाफ आंदोलन और मणिपुर में नग्न विरोध

10.4.8 निर्भया आंदोलन

10.5 मौलिक अधिकार बनाम मुस्लिम पर्सनल लॉ

10.5.1 शाहबानो मामला

10.5.2 तीन तलाक

10.6 सारांश

10.7 अभ्यास प्रश्न

10.8 संदर्भ ग्रंथ

10.1 प्रस्तावना

भारत में महिलाओं को लम्बे समय से "शक्ति" का रूप माना जाता है। प्राचीन भारत में महिलाओं को धार्मिक और सांस्कृतिक समारोहों में समान अधिकार प्राप्त थे। वे घर से बाहर काम करने अपने अधिकारों का उपयोग करने तथा किसी मुद्दे पर अपने विचार व्यक्ति करने के लिए स्वतंत्र थीं। समय बीतने के साथ विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक घटनाओं के कारण भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति कमजोर होती गई। सामाजिक आकांक्षाओं तथा समय की आवश्यकताओं के अनुरूप सुधार आंदोलनों, नैतिक संहिताओं, आदर्श मूल्यों, शिक्षा और नैतिकता के माध्यम से महिलाओं की भूमिका निर्मित और पुनर्निर्मित हुई है।

ठोस वास्तविकताओं से पता चलता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में महिलाओं की भूमिका और स्थिति थोड़ी विरोधाभासी है। एक तरफ भारतीय देवियों की पूजा करते हैं और दूसरी तरफ दहेज, घरेलु शोषण दुष्कर्म और उत्पीड़न जैसी सामाजिक बुराईयां महिलाओं के खिलाफ जारी हैं। ऐसी स्थिति इस तथ्य के बावजूद है कि महिलाओं की एक बड़ी संख्या शिक्षित है और घर से बाहर जाकर नौकरी करती हैं और अपने परिवारों को समर्थन प्रदान करती हैं। व्यवसाय, खेल, शिक्षा जगत आदि सभी क्षेत्रों में महिलाओं ने अपनी उत्कृष्टता सिद्ध की है लेकिन अभी भी उन्हें पुरूषों के बराबर नहीं माना जाता है। एक लड़के के जन्म पर खुशी मनाई जाती है लेकिन एक लड़की के पालन-पोषण के लिए सरकार और समाज

सुरुचि अग्रवाल, शोधार्थी, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली–25

को विशेष उपाय करने पड़ते हैं। महिलाओं की भूमिका और स्थिति के प्रति भारतीय समाज के इस दोहरे रवैये ने कई महिला आंदोलनों को जन्म दिया है। कई महिला संगठन अस्तित्व में आए हैं जो पूरे देश में महिलाओं की समस्याओँ और उनके अधिकारों के लिए निरंतर संघर्ष कर रहे हैं। ऐसे कुछ संगठन हैं - अखिल भारतीय महिला सम्मेलन (AIWC), राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW), दिल्ली में सहेली और स्त्री संघर्ष, हैदराबाद में अस्मिता, बेंगलुरु में विमोचना, दिल्ली राज्य महिला आयोग आदि।

लक्ष्य एवं उद्देश्य

इस इकाई में आप पढ़ेंगे :

- स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति
- महिलाओं के बारे में गाँधी जी का दृष्टिकोण
- भारत में महिला आंदोलनों की प्रकृति
- स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में विभिन्न लोकप्रिय महिला आंदोलन

10.2 महिलाओं के बारे में गाँधीजी का दृष्टिकोण

पुरुष-महिला के बारे में गाँधीजी के विचार हमारे समय के विमर्श से सबसे अधिक मेल खाते हैं। गाँधीजी एक बहुआयामी विचारक थे और उन्होंने सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और नैतिक मुद्दों पर विस्तार से लिखा। समाज में महिलाओँ की स्थिति और पहचान के प्रति गाँधीजी के विचार उनके आस्तिक और नैतिक दृष्टिकोण से बहुत प्रभावित है। उन्होंने कहा, "उन सभी बुराईयों में जिसके लिए मनुष्य जिम्मेदार है, कोई भी बुराई इतनी चौंकाने वाली या शर्मनाक नहीं है जितनी कि मानवता के आधे हिस्से के प्रति उनका दुर्व्यवहार।" गाँधीजी कहते हैं, "मैं महिलाओँ को कमजोर नहीं मानता। महिलाएं पुरुषों की अपेक्षा अधिक नेक होती है और आज भी वे त्याग, मौन, पीड़ा, विनम्रता, विश्वास और ज्ञान की प्रतिमूर्ति हैं।" पुरूषों से पृथक अपनी अलग पहचान बनाने और आत्मनिष्ठा हासिल करने के लिए गाँधीजी ने महिलाओँ को स्वयं-सहायता और आत्मनिर्भरता का मार्ग अनुसरण करने के लिए प्रोत्साहित किया।

उनका विश्वास था कि सत्याग्रह के सिद्धांतों के आधार पर अपने स्वंय के प्रयासों से महिलाएं समाज में अपनी सही जगह बना सकतीं हैं। वे नहीं चाहते थे कि कोई महिला अपने को पुरुष के लिए भोग की वस्तु समझे और अपने पुरुष के लिए स्वयंको सजाए-संवारे। ऐसी स्थिति में वह पुरुष द्वारा निर्मित व्यवस्था के समक्ष कमजोर पड़ जाएगी और स्वयं का त्याग करके एक वस्तुमात्र रह जाएगी। गाँधीजी पुरुष और स्त्री को एकसमान मानते थे। उनका कहना था कि दोनों की समस्याएं एक हैं और दोनों समान जीवन जीते हैं। इस प्रकार गाँधी जी महिलाओँ को सक्रिय बनाना चाहते थे। उन्होंने स्त्री-शिक्षा पर जोर दिया ताकि वे समाज में उचित स्थान प्राप्त कर सकें।

10.3 भारत में महिला आंदोलनों की प्रकृति

भारत में स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के महिला आंदोलनों के बीच बड़ा अंतर है। स्वतंत्रता पूर्व के आंदोलन मुख्यतः सामाजिक सुधार से जुड़े थे जो ब्रह्म समाज (राजा राम मोहन राय), आर्य समाज (ईश्वर चंद्र विद्यासागर) आदि संगठनों के पुरुषों द्वारा प्रारंभ किये गये थे। ये आंदोलन सती, पुनर्विवाह, तलाक, महिला शिक्षा, पर्दा प्रथा, बहुविवाह, दहेज जैसी समस्याओँ पर केन्द्रित थे। गाँधीजी ने स्वतंत्रता आंदोलन के लिए महिलाओं को

सामूहिक रूप से संगठित किया तथा अपने सामाजिक एवं राजनीतिक अधिकारों के लिए संघर्ष करने हेतु प्रेरित किया। 19वीं सदी की शुरुआत में उच्च जाति के अभिजात्य हिन्दु पुरुष ही समाज में महिलाओं की स्थिति पर सवाल खड़े करते थे। स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह और सती के खिलाफ अभियान जैसे मुद्दे लोकप्रिय हुए। 1920 के दशक में भारतीय महिलाओं ने नारीवाद के एक नये चरण में प्रवेश किया। स्थानीय स्तर पर महिला संघों का गठन हुआ जो स्त्री शिक्षा, कामकाजी महिलाओं के लिए आजीविका संबंधी रणनीति जैसे मुद्दों पर काम करता था और राष्ट्रीय स्तर पर अखिल भारतीय महिला सम्मेलन जैसे संगठनों के साथ संपर्क में रहता था। अखिल भारतीय महिला सम्मेलन, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से जुड़ा था और राष्ट्रवादी एवं उपनिवेशवादी आंदोलन में भाग लेता था। गाँधीजी के नेतृत्व में सामूहिक स्तर पर महिलाओं को संगठित करना, राष्ट्रवाद का अभिन्न हिस्सा बन गया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के आंदोलन लैंगिक समानता, श्रम का लिंग आधारित विभाजन और पितृसत्तात्मक समाज की दमनकारी प्रवृति जैसे मुद्दों पर केन्द्रित थे। भारत में महिला आंदोलनों को मुख्यतः 4 श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है-

क) आदिवासी, किसान और औद्योगिक श्रमिक जैसे विशिष्ट समूहों द्वारा सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अधिकारों के लिए चलाये गए आंदोलन

ख) काम की परिस्थितिआँ में सुधार तथा महिला स्वतंत्रता के लिए आंदोलन

ग) पुरुषों के मुकाबले कम वेतन के खिलाफ आंदोलन और

घ) पुरुषों और बच्चों को प्रभावित करने वाले मुद्दों जैसे गर्भपात, बच्चों को गोद लेना, यौन शोषण आदि पर आधारित सामाजिक आंदोलन।

10.4 भारत में महिला आंदोलन

विकासात्मक अर्थशास्त्र के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता अमर्त्य सेन के अनुसार, रचनात्मक असहमति के विभिन्न रूपों के साथ प्रयोग करने के लिए महिलाओं को संगठित करना समाज में उनकी स्थिति के बारे में सवाल खड़े करता है तथा विकास की प्राकृतिक गारंटी देने वाले के रूप में महिलाओं को जवाब ढूंढने में मदद करता है। सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्तर पर मुकाबला करने की अपनी रणनीतियों के माध्यम से महिलाएं अपने दैनिक जीवन में शक्ति-संबंधों का सामना कर रहीं है। औपचारिक राजनीति की आम धारणा महिलाओं को शामिल करने में विफल रहती है लेकिन अपने विभिन्न रूपों में राजनीति महिलाओं के दैनिक जीवन में विद्यमान है। इसके लिए पितृसत्तात्मक व्यवस्था तथा सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और धार्मिक नियमों व प्रथाओं को उत्तरदायी माना जा सकता है। महिलाओं को राजनीतिक सत्ता संरचनाओं से बाहर रखा गया है। इसके परिणामस्वरूप संसाधनों का असमान विभाजन हुआ है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी महिलाएं कई अवसरों पर एकताबद्ध होकर आगे आई हैं और केवल लैंगिक मुद्दों के लिए नहीं वरन् उन्होंने कई महत्वपूर्ण सामाजिक-आर्थिक आंदोलनों का नेतृत्व किया है।

10.4.1 चिपको आंदोलन

दैनिक आधार पर महिलाओं के जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है उनमें प्रमुख है- दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने जरूरी संसाधनों की कमी। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओँ को जलावन की लकड़ी इकट्ठा करने तथा दो मटके पानी के लिए मीलों पैदल चलना पड़ता है। जब वनों की कटाई और निम्नीकरण से मिट्टी की प्राकृतिक उर्वरता खत्म हो जाती है तो भूखे परिवार के खिलाने की जिम्मेदारी महिला पर आ जाती है। भारत एक

विकासशील देश है और औद्योगिकीकरण की दौड़ ने समस्या को और भी गंभीर बना दिया है। भारत के विभिन्न भागों में इन समस्याओँ के खिलाफ पर्यावरण-नारीवादी आंदोलन चल रहे हैं। वंदना शिवा के अनुसार, "पुरुषों की परवाह न करते हुए बड़ी संख्या में महिलाओं का भाग लेना, उनकी "शक्ति" को दर्शाता है। महिलाओं के दमन के बावजूद भारत में एक सार्वभौमिक सहमति है कि महिलाएं प्रकृति को पोषण प्रदान करती हैं। प्राचीन सभ्यता और ग्रंथों में पारितंत्रध्पर्यावरण के संदर्भ में महिलाओं को उच्च स्थान पर रखा गया है।

चिपको आंदोलन एक अहिंसक, सामाजिक और पारितंत्र केन्द्रित आंदोलन है जो उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल पर्वतीय क्षेत्र में प्रारंभ हुआ। चिपको आंदोलन को मुख्य रूप से महिलाओं के आंदोलन के रूप में जाना जाता है। अलकनंदा घाटी में 1973 में आई बाढ़ ने जीवन और संपत्ति को नष्ट कर दिया। एक दिन महिलाओं ने श्रमिकों को कुल्हाड़ी के साथ देखा। इन श्रमिकों को ठेकेदारों ने पेड़ काटने के लिए भेजा था। महिलाओं ने इसका विरोध किया और पेड़ों को बचाने की शपथ ली। महिलाओं के छोटे-छोटे समूह पेड़ों की निगरानी करते थे और पेड़ों को कटने से बचाने के लिए महिलाएं पेड़ों से चिपक जातीं थीं। अगले 75 दिनों तक महिलाएं आस-पास के क्षेत्रों में गई और वहाँ की महिलाओं से विरोध में शामिल होने की अपील की। महिलाओं ने वनों के व्यावसायिक दोहन के खिलाफ सशक्त विरोध की अपील की। मीरा बहन, सरला बहन, विमला बहन, हिमा देवी, गौरी देवी, गंगा देवी, बचनी देवी, इतवारी देवी, चमुन देवी और अन्य महिलाएं इस आंदोलन को नेतृत्व प्रदान कर रही थीं। सुंदरलाल बहुगुणा, गौरी देवी और गंगा देवी के नेतृत्व में आंदोलन को शानदार सफलता मिली। परिणामस्वरूप सरकार ने क्षेत्र में व्यावसायिक इस्तेमाल के लिए हरे पेड़ों को काटने पर प्रतिबंध लगा दिया। चिपको आंदोलन की मांग मुख्य रूप से पारितंत्र संरक्षण पर आधारित थी। इस आंदोलन की अगुवाई महिलाओं ने की थी। इसने महिलाओं को नीतिगत निर्णय में मजबूत प्रतिनिधित्व के लिए प्रेरित किया। इस आंदोलन ने अन्य जगहों के आंदोलनों में महिलाओं की नेतृत्व भूमिका को रेखांकित किया।"

10.4.2 नर्मदा बचाओ आंदोलन (1985)

"नर्मदा बचाओ आंदोलन" या "सेव द नर्मदा मूवमेंट" मूल रूप से विकास के अनियमित और गैर-जिम्मेदार स्वरूप (पैटर्न) के खिलाफ एक आंदोलन था। यह बांध निर्माण से प्रभावित लोगों को न्याय सुनिश्चित करने की लड़ाई थी। आंदोलन का मुख्य जोर नर्मदा नदी पर प्रस्तावित सबसे बड़े बांध, सरदार सरोवर परियोजना का विरोध करना था। संघर्ष 1985 में प्रारंभ हुआ। मुद्दे पर जागरूकता फैलाने के लिए भूख हड़ताल तथा सद्भावना पदयात्राएं आयोजित की गई और बड़े पैमाने पर जनसंचार के माध्यमों का उपयोग किया गया। लोगों को न्याय दिलाने के लिए यह सबसे बड़े अहिंसक आंदोलनों में से एक था। 1989 में इसने पर्यावरण और आजीविका केन्द्रित आंदोलन का रूप ले लिया। इसने बांध निर्माण का जोरदार विरोध किया और एक न्यायपूर्ण पुनर्वास नीति लाने की मांग की। एक अकेली महिला-मेघा पाटकर के 32 वर्षों के अथक प्रयास के बाद विश्व बैंक में परियोजना के स्वतंत्र समीक्षा पर सहमति जताई। विश्व बैंक इस परियोजना का प्रायोजक था और 1995 में बैंक ने परियोजना से अपने हाथ खींच लिए। वे आंदोलन की एक प्रेरणादायी नेता थीं जिन्होंने कई भूख हड़तालें और उपवास किये। पूरे आंदोलन के दौरान उन्हें और अन्य आंदोलनकारियों को पुलिस की कड़ी कार्रवाई झेलनी पड़ी लाठीचार्ज का सामना करना पड़ा।

10.4.3 दहेज विरोधी आंदोलन (1980-)

दहेज निषेध अधिनियम 1961 में अस्तित्व में आया। प्राचीन काल से ही इस सामाजिक बुराई ने भारतीय समाज और महिलाओँ को त्रस्त कर रखा है। इस कारण लोग और परिवार

लड़की के जन्म को एक बोझ के रूप में देखते हैं। 1980 के दशक में देश के सभी हिस्सों में दहेज हत्या की खबरें आने लगी। दहेज के खिलाफ शांत विरोध एक मजबूत आंदोलन बन गया। 1977 में आंदोलन को और गति मिली तथा महिलाएँ दहेज को लेकर किये जाने वाले अपराधों विशेषकर हत्या और आत्महत्या के लिए प्रेरित करने के खिलाफ हो गईं।

महाराष्ट्र, कर्नाटक और गुजरात में विरोध प्रारंभ हुआ। दिल्ली में दहेज और दहेज को लेकर होने वाले अपराध के मुद्दे को पहली बार "महिला दक्षता समिति" ने उठाया। "स्त्री संघर्ष" एक नारीवादी संगठन था जिसने दहेज उत्पीड़न को घरेलु चर्चा का विषय बना दिया। 1 जून, 1979 को एक विरोध जुलूस का आयोजन किया गया। दहेज को लेकर तरविन्दर कौर की हत्या उसकी सास और ननद ने कर दी थी। विरोध की शुरूआत इंद्रप्रस्थ महिला कॉलेज ने की थी। समिति ने स्त्री संघर्ष को जुलूस का आयोजन करने की सलाह दी थी। प्रगतिशील छात्र संगठन ने भी विरोध जुलूस को समर्थन दे दिया। इससे यह पता चलता है कि ऐसे सामाजिक मुद्दों का युवाओं पर गहरा प्रभाव पड़ता है। राष्ट्रीय स्तर पर यह आंदोलन सफल हुआ और प्रेस ने भी इसे प्रमुखता से जगह दी। पूरी दिल्ली में कई विरोध प्रदर्शन आयोजित किए गए।

ऐसे आंदोलनों ने दिखाया कि दहेज उत्पीड़न जैसे मामलों को लोगों के बीच उठाने से महिला व नारीवादी संगठनों का समाज पर गहरा प्रभाव पड़ता है। परन्तु लोगों तक पहुँचने में उन्हें कई अवरोधों का सामना करना पड़ा। प्रमुख अवरोध था - विवाह के प्रति समाज का दृष्टिकोण। महिला जो अपने पति या ससुराल के लोगों द्वारा उत्पीड़ित की जाती थी, किसी अन्य विकल्प के अभाव में उनके साथ ही रहने के लिए विवश थी। अपने माता-पिता के घर वापस जाने या अलग रहने को वांछनीय नहीं माना जाता था क्योंकि उनके परिवार को सामाजिक दंश झेलना पड़ता था। मकान-मालिक अपना घर अकेली महिला को किराए पर नहीं देना चाहते थे क्योंकि उन्हें या अन्य लोगों को वेश्यावृत्ति का डर सताता था। महिलाओं को (अभी भी) सामाजिक रूप से इस प्रकार तैयार किया जाता था कि वे अपने की आज्ञाकारी और विनम्र रहें। इसलिए शारीरिक, मानसिक और यौन प्रताड़ना के बावजूद महिलाएं अपने पति के साथ ही रहती थीं।

नारी रक्षा समिति और महिला दक्षता समिति के प्रयासों से समाज के सभी वर्गों में आंदोलन जारी रहा। देश की कानूनी व्यवस्था में कई नई चीजें जोड़ी गईं। दिसम्बर 1983 में आपराधिक कानून (दूसरा संशोधन) अधिनियम पारित हुआ। भारतीय दंड संहिता में धारा 498ए जोड़ी गई। इस धारा के तहत, शारीरिक और मानसिक उत्पीड़न को गैर-जमानती अपराध घोषित किया गया और इसके लिए अधिनियम दो वर्षों के कारावास व आर्थिक दंड का प्रावधान किया गया। भारतीय साक्ष्य अधिनियम को भी संशोधित किया गया और इसमें धारा 113ए को शामिल किया गया जिससे आत्महत्या के लिए प्रेरित करने को साबित करना आसान हो गया। इसके अलावा आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 174 में संशोधन किया गया। इसके तहत शादी के पहले 7 वर्षों के अंदर महिला की मृत्यु होने पर पोस्टमार्टम को अनिवार्य बना दिया गया। इसके पहले केन्द्र सरकार ने नवंबर, 1980 में आदेश दिया था कि यदि विवाह के 5 वर्षों के अंदर संदिग्ध परिस्थितियों में महिला की मौत होती है तो मौत की जांच व शव का पोस्टमार्टम अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए। सितंबर, 1980 में हरियाणा सरकार ने विवाहित महिलाओं के सभी अप्राकृतिक मौतों को हत्या के रूप में दर्ज करना (धारा 302, भारतीय दंड संहिता) अनिवार्य कर दिया। आत्महत्या के लिए उकसाने/प्रेरित करने के मामलों को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के तहत दर्ज करना अनिवार्य कर दिया गया।

10.4.4 निषेध आंदोलनः आंध्र प्रदेश में अरक/शराब विरोधी आंदोलन

निषेध या शराबबंदी आंदोलन शराब के आदी लोगों द्वारा घर के समान बेचने, महिलाओं की आय को शराब पर खर्च करने, शराब पीकर झगड़ा, मार-पीट करने, घरेलु हिंसा करने आदि के खिलाफ एक विद्रोह था। अर्क/शराब विरोधी आंदोलन नेल्लौर के सुदूर गांव डूबगुंटा में शुरू हुआ जहाँ एक बुजुर्ग महिला रोसम्मा प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम से प्रेरित हुई थी। गाँव की महिलाओं द्वारा किया गया विरोध आस-पास के गांवों में भी फैल गया। विरोध सम्बन्धी जानकारी एक महिला से दूसरी महिला तक तथा स्थापित सामाजिक नेटवर्क के माध्यम से अथ महिलाओं तक पहुंची। अथ जिलों के कई समुदायों की महिलाओं ने सहज कार्रवाई की और इस प्रकार पूर्व-स्थापित सामाजिक नियमों को तोड़ दिया। पितृसत्ता और सार्वजनिक रूप से महिलाओं की गैर-भागीदारी के नियम टूट गए।

आंध्र प्रदेश का अरक विरोधी आंदोलन महिलाओं द्वारा शुरू किया गया और चलाया गया आंदोलन था लेकिन बाद में कई संगठन इस आंदोलन से जुड़ गए। इन संगठनों ने पूरे राज्य में महिलाओँ को संगठित किया और अरक तथा शराब पर प्रतिबंध लगने तक आंदोलन को जारी रखने के लिए समर्थन प्रदान किया। इस संगठनों में राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, स्थानीय महिला इकाइयां और मुद्दों पर आधारित अनौपचारिक समूह शामिल थे। इसके अलावा विभिन्न विचारधाराओँ और प्राथमिकता वाले कई राजनीतिक दलों ने भी इस आंदोलन को समर्थन दिया। शराब/अर्क, व्यसन तथा राज्य सरकार की नीतियों के खिलाफ इन संगठनों ने साथ मिलकर लड़ाई जारी रखी। अरक और शराब पर प्रतिबंध के लिए सरकार की नीति में बदलाव को आवश्यक माना गया।

हरियाणा और आंध्रप्रदेश दो ऐसे राज्य थे जिन्होंने शराबबंदी लागू की लेकिन बाद में इसे वापस ले लिया। इसका कारण सिर्फ वित्तीय नुकसान नहीं था बल्कि कार्यान्वयन की समस्याएं थी जैसे अवैध शराब उत्पादन तथा अवैध शराब की बिक्री को नियंत्रित करना। हरियाणा ने शराबबंदी के कई प्रयास किये लेकिन अंततः इसे वापस लेना पड़ा। शराबबंदी के लिए आंदोलन करने वाली महिलाओँ ने भी शराबबंदी को समाप्त करने का समर्थन किया क्योंकि महिलाओं ने पाया कि पुरूषों को वैध तरीके से शराब नहीं मिलने पर वे अवैध शराब का सेवन करते हैं। जहरीली शराब से होने वाली मौतों की घटनाएं सामने आई। आंध्र प्रदेश ने 1994 में अवैध शराब पर प्रतिबंध लगाया। यह प्रतिबंध महिलाओं द्वारा शराबबंदी के लिए चलाये गए उग्र सामाजिक आंदोलन का परिणाम था।

आंदोलन के प्रारंभिक चरण में कई महिलाओं को लाठियां खानी पड़ी और कुछ महिलाओं को पुलिस ने गिरफ्तार भी किया। आंदोलनकारी महिलाओं को अरक और शराब के ठेकेदारों ने धमकियां दीं, कुछ महिलाओं को गुंडों से पिटवाया गया। महिलाओं ने इन सभी बाधाओँ को पार किया। इस दौरान प्रिंट मीडिया और विपक्षी पार्टियों तथा इनके प्रमुख संगठनों ने भरपूर समर्थन दिया। आंदोलन को समर्थन देने वाले संगठनों ने अपने कार्यकर्ताओं और संसाधनों के बल पर जमीनी स्तर के एक भावनात्मक आंदोलन को एक व्यापक जनांदोलन में परिवर्तित कर दिया। इससे आंदोलन को नई ऊर्जा और गति मिली। यह आंदोलन जल्द ही एक राजनीतिक आंदोलन बन गया और सत्ता में बैठे लोगों की चिंताएं बढ़ गईं। सरकार ने प्रारंभिक चरण में पुलिस कार्रवाई की लेकिन बाद में सरकार को इससे पीछे हटने के लिए मजबूर होना पड़ा। सरकार ने अपने पहले की नीति में बदलाव किया और शराबबंदी के लिए समयबद्ध कार्यक्रम का प्रस्ताव दिया।

आंध्र प्रदेश का अरक विरोधी आंदोलन को एक बड़ी सफलता के रूप में देखा जाता है। इसके कई कारण थे। यह एक सरल और पारदर्शी मुद्दे पर केन्द्रित था। यह मुद्दा था

मद्यनिषेध या शराबबंदी जिसे सभी लोग आसानी से समझ सकते थे। निम्न तबके की महिलाओं ने बड़ी संख्या में इस आंदोलन में भाग लिया। स्थानीय मीडिया, स्वैच्छिक संगठनों और राजनीतिक समूहों के समर्थन से आंदोलन को गति मिली और आंदोलन आगे बढ़ता गया। उपलब्ध संसाधनों - लोग, सामग्री, विचार और संगठन के प्रभावी इस्तेमाल से आंदोलन मजबूत हुआ। आंदोलन के लोकप्रिय होने के बाद यह विस्फोटक हो गया और इसे रोकना मुश्किल हो गया। प्रशासन का प्रतिरोध भी कमजोर पड़ने लगा। सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि आंदोलन का चरित्र एक सफल अहिंसक आंदोलन अर्थात् अनुशासित व्यवधान के रूप में बना रहा।

10.4.5 खाप पंचायतों के खिलाफ आंदोलन (1995)

1995 में हरियाणा के जिंद जिले के युवक ने खाप पंचायत के आदेश के खिलाफ अपने गांव की ही एक लड़की से शादी की। सजा के रूप में पंचायत सदस्यों ने आदेश दिया कि लड़के की 12 वर्षीय बहन के साथ रेप किया जाना चाहिए। गांव के पुरुषों और महिलाओं के बीच एक तीखी लड़ाई शुरू हो गई। पुरूष आदेश के पक्ष में थे जबकि महिलाओं ने इसका कड़ा विरोध किया। एक समाज सुधारक जगमति सांगवान के नेतृत्व में लगभग 1000 महिलाओँ ने विरोध प्रदर्शन किया। कुछ ऐसी महिलाओं ने भी इस प्रदर्शन में भाग लिया जिनके प्रति पंचायत के आदेश का समर्थन कर रहे थे।

सांगवान के द्वारा आयोजित यह बड़े जनांदोलनों में से एक था। आने वाले वर्षों में उसने हरियाणा में बड़े महिला आंदोलनों की अगुवाई की। सांगवान के प्रयासों से लगभग 50,000 महिलाएं जनवादी महिला समिति की सदस्य बनी। अपने समर्थकों के साथ जगमति सांगवान कन्या भ्रूण हत्या और ऑनर किलिंग के खिलाफ तीव्र आंदोलनों का नेतृत्व किया। वह खाप पंचायतों के सख्त खिलाफ थी। उनका मानना था कि खाप पंचायतें इस आधार पर निर्णय देती हैं कि महिलाएं परिवार का सम्मान होती हैं।

10.4.6 गुलाबी गैंग (2002)

उत्तर प्रदेश के बांदा जिले के बदौसा की सुमन सिंह चौहान का 2002 में सामना एक ऐसी घटना से हुआ जिसमें उसकी दोस्त को उसके शराबी पति ने बुरी तरह पीटा। सुमन ने अपनी कुछ दोस्तों और पड़ोसियों को इकट्ठा किया और अपनी दोस्त के घर पहुंचकर उसके शराबी पति को लोगों के सामने पीटा। इस घटना से बदौसा में महिला रक्षकों के समूह का जन्म हुआ जिसमें वे स्वयं पर सामाजिक बुराईयां को ठीक करने की जिम्मेदारी लेती थी।

महिलाओं के इस समूह का नाम गुलाबी गैंग था। गैंग की गतिविधियां केवल लिंग आधारित बुराईयां तक सीमित नहीं थी बल्कि इसने जमाखोरी, घूसखोरी, जातिगत भेदभाव आदि सामाजिक बुराईयों को भी आड़े हाथों लिया। गुलाबी साड़ियाँ पहनकर तथा हाथों में बांस की लाठियां लेकर गुलाबी गैंग की महिलाएं अपनी आवाज पहुँचाने के लिए हिंसा का अक्सर सहारा लेती थीं।

बदौसा भारत के 200 निर्धनतम जिलों में शामिल है। यहाँ अशिक्षा, जाति और लिंग आधारित हिंसा सभी जगह मौजूद थी। गैंग की अधिकांश महिलाएं दलित समुदाय से आती थी। बीबीसी के साथ एक बातचीत में गैंग की स्वघोषित नेता संपत पाल देवी ने कहा, "यहाँ कोई भी व्यक्ति हमारी मदद के लिए आगे नहीं आता है। अधिकारी और पुलिस भ्रष्ट और गरीब-विरोधी है। इसलिए हमें कभी-कभी कानून अपने हाथ में लेना पड़ता है। कुछ अन्य मौकों पर हम गलत करने वालों को शर्मिंदा करना पसंद करते हैं।"

10.4.7 मणिपुर में अफस्पा के खिलाफ आंदोलन और नग्न विरोध

मणिपुर के लोग लम्बे समय से सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम (अफस्पा) का विरोध करते रहे हैं। लोगों का मानना है कि इस अलगाववाद-विरोधी कानून ने राज्य में शांति से अधिक अशांति पैदा की है। मणिपुर में अफस्पा आंदोलन ने न्याय, जवाबदेही, जीवन और स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार जैसे मुद्दे उठाए। ये सभी मुद्दे भारतीय लोकतंत्र के वर्तमान कामकाज और भविष्य के लिए आवश्यक हैं। इरोम शर्मिला अफस्पा-विरोधी आंदोलन का एक जाना-पहचाना नाम है। उन्होंने अफस्पा के खिलाफ 16 वर्ष लम्बा उपवास रखा और इससे पूरी दुनिया में जागरूकता फैली। शर्मिला ने 9 अगस्त, 2016 को अपना ऐतिहासिक उपवास तोड़ा क्योंकि उन्होंने महसूस किया कि नई रणनीति अपनाने का यह उपयुक्त समय है। नई रणनीति का तात्पर्य था - चुनाव लड़ना, सत्ता प्राप्त करना और सुशासन स्थापित करना। विभिन्न क्षेत्र के लोग और संगठन शर्मिला को समर्थन देने लगे। इनमें प्रमुख थे - नेशनल एसोसिएशन ऑफ पीपुल्स मूवमेंट (एनएपीएम) नगा पीपुल्स मूवमेंट फॉर ह्यूमन राइट्स (एनपीएमएचआर), महिला संगठन, मानवाधिकार और नागरिक संगठन (दिल्ली, मुंबई, हैदराबाद, कोलकाता आदि)।

इरोम शर्मिला के उपवास के दौरान एक ऐसी घटना हुई जिसने मणिपुर की महिलाओं को एकजुट कर दिया। 11 जुलाई, 2004 को असम राइफल्स (भारत में अर्धसैनिक बल की इकाई) ने 32 वर्षीय थंगजम मनोरमा को गिरफ्तार कर लिया। मनोरमा पर प्रतिबंधित संगठन पीपुल्स लिबरेशन आर्मी का हिस्सा होने का आरोप लगाया गया। अगली सुबह उसकी लाश मिली। दुष्कर्म के बाद हत्या की गई थी। उसकी योनि में गोलियां दागी गई थीं।

हत्या के 5 दिनों के बाद, मनोरमा पर सेना के अत्याचार के खिलाफ 30 महिलाओं ने इंफाल की सड़कों पर विरोध प्रदर्शन किया। वे पूरी तरह नग्न थी और वे पैदल इंफाल के कंगला फोर्ट तक गई जहाँ असम राइफल्स को तैनात किया गया था। उनके हाथों में तख्ती थी जिसमें लिखा था "भारतीय सेना हमारा बलात्कार करती है।" सभी महिला चीखते हुए कह रही थी, "हम सभी मनोरमा मां है।" इस झकझोर देने वाले विरोध के बाद असम राइफल्स ने कंगला फोर्ट खाली कर दिया। अफस्पा के खिलाफ मणिपुर की महिलाओँ का संघर्ष अब भी जारी है।

10.4.8 निर्भया आंदोलन

दिसंबर, 2012 में नई दिल्ली ने एक जघन्य अपराध देखा - एक महिला मेडिकल छात्रा का चलती बस में सामूहिक बलात्कार किया गया और फिर घायल और बेहोशी की हालत में राजमार्ग के किनारे फेंक दिया गया। इस हमले में उसकी मृत्यु हो गई। मीडिया ने पीड़िता को "निर्भया" नाम दिया। इस हृदय विदारक घटना ने भारत में क्रांति ला दी। लोगों ने इस घटना का जमकर विरोध किया और कहा कि अब बहुत हो गया - अब हम चुप नहीं बैठेंगे। देश के विभिन्न भागों में हजारों लोगों ने सड़कों पर विरोध प्रदर्शन किये। आंदोलन ने सोशल मीडिया को भी झकझोर दिया। लोगों ने अपनी तस्वीर को काले धब्बे में बदल दिया। लाखों लोगों ने इस घटना का विरोध करते हुए याचिका पर हस्ताक्षर किये। आंदोलन की व्यापकता और तीव्रता को ध्यान में रखते हुए केन्द्र तथा कई राज्य सरकारों ने महिला-सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कई उपायों की घोषणा की।

10.5 मौलिक अधिकार बनाम मुस्लिम पर्सनल लॉ

महिला आंदोलन महिलाओं के मुद्दों को गैर-सांप्रदायिक बनाने में सफल नहीं हुए हैं। महिला संगठनों और नारिवादियों को यह नहीं पता था कि विभिन्न धार्मिक समूहों से जुड़ी महिला समस्याओं से कैसे निपटा जाए। 1970 के दशक में जब नारीवादी आंदोलन की शुरुआत हुई, अल्पसंख्यकों की पहचान एक कठोर रूप ले चुकी थी। इस विभाजनकारी वातावरण ने मुस्लिम महिलाओं को प्रभावित किया। धार्मिक कट्टर पंथियों ने धार्मिक-सांस्कृतिक पहचान को बचाए रखने की जिम्मेदारी महिलाओं के ऊपर डाल दी। पहचान के इस मामले में महिला केन्द्र में थी। इससे मुस्लिम महिलाओं की गंभीर वास्तविकताओं तथा वास्तविक इस्लामी स्थिति से ध्यान विचलित हो गया।

हालांकि महिला आंदोलनों का चरित्र धर्मनिरपेक्ष था परन्तु इन्हें एक कठिन चुनौती का सामना करना पड़ा। उन्हें यह पता नहीं था कि इस स्थिति से कैसे निपटना है। वैचारिक स्तर पर भारतीय नारीवादी दुविधा में थे : मुस्लिम महिलाओं के मुद्दों को किस प्रकार नारीवादी मुद्दों में शामिल किया जाए और साथ ही साथ उनकी धार्मिक तथा सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखा जाए। मुस्लिम पर्सनल लॉ के संदर्भ में यह सबसे स्पष्ट था। मुस्लिम महिलाओं की समस्याओं को धर्म के दायरे में रखने के कारण वे और भी हाशिए पर चली गई और धार्मिक भावनाओं को आहत करने के भय से उनकी समस्याओं पर विचार करने में धर्मनिरपेक्ष नारिवादियों के मन में दुविधा पैदा हुई।

10.5.1 शाहबानो मामला (1985)

शाहबानो मामला इसका सबसे सटीक उदाहरण है। पति ने शाहबानो को भरण-पोषण का खर्च देने से इंकार कर दिया। 1986 में मामला सर्वोच्च न्यायालय पहुंचा। सर्वोच्च न्यायालय ने शाहबानो की याचिका को धारा 125 और मुस्लिम पर्सनल लॉ के तहत बरकरार रखा। मुस्लिम इसके खिलाफ हो गए और मुस्लिम महिला भरण-पोषण अधिकार (तलाक अधिनियम) 1986 विधेयक संसद में रखा गया हालांकि कई लोग और संगठनों ने इसका विरोध किया। सत्ताधारी कांग्रेस पार्टी ने इस विधेयक का समर्थन किया क्योंकि सरकार मुस्लिमों को संतुष्ट करना चाहती थी विशेषकर ऐसे समय में जब बाबरी मस्जिद, अयोध्या के ताले तोड़ दिए गए थे। इस विधेयक के पारित होने पर पूरे देश में इसके समर्थन और विरोध में जोरदार प्रदर्शन हुए। महिला संगठनों ने कहा कि चुनावी राजनीति के लिए सरकार महिलओं के हितों का बलिदान दे रही है। कई मुस्लिम महिलाओं ने इस विधेयक का समर्थन किया परन्तु महिला संगठनों ने यह महसूस किया कि धार्मिक आधार पर महिलाओं का ध्रुवीकरण हो सकता है। बहन होने की भावना ऐसी औषधि नहीं रह गई थी जिसपर महिलाएं बिना किसी संकोच के भरोसा कर सकती थीं।

10.5.2 तीन तलाक (2016)

मुस्लिम पुरूष अपनी पत्नियों को "तलाक" शब्द का तीन बार उच्चारण करके अपनी शादी खत्म कर सकते थे। ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के अनुसार यह प्रथा पाप के समान है परन्तु यह मुस्लिमों के लिए आस्था का मामला है। बोर्ड के विचार में यदि पुरुष इस तरीके से तलाक नहीं दे पाएंगे तो वे पत्नियों से पीछा छुड़ाने के लिए हत्या जैसे अन्य जघन्य तरीकों को अपनाएंगे। आधुनिक तकनीक ने मुस्लिम पुरुषों के लिए तलाक देने की प्रक्रिया को और भी सुविधाजनक बना दिया है। वे फोन करके, ईमेल और मैसेज से तलाक दे देते हैं। ऐसे भी उदाहरण हैं कि मुस्लिम पुरुषों ने स्काइप, व्हाट्सएप और फेसबुक के माध्यम से बिना कोई जिम्मेदारी लिए तलाक दे दिया है। भारतीय मुस्लिम महिला आंदोलन

(बीएमएमए) ने 2005 के आसपास इस प्रथा के खिलाफ एक मुखर आंदोलन की शुरुआत की। दिसम्बर, 2012 में तीन तलाक पर प्रतिबंध के लिए एक जन सुनवाई आयोजित की गई। इन लोगों ने प्रधानमंत्री, कानून मंत्री, अल्पसंख्यक कार्य मंत्री और महिला एवं बाल विकास मंत्री को पत्र लिखकर और तीन तलाक पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए 50,000 हस्ताक्षर एकत्रित किये।

यह मुद्दा 2016 में पूरी ताकत के साथ सामने आया जब शायरा बानो और आफरीन रहमान ने सर्वोच्च न्यायालय में अपने तीन तलाक को चुनौती दी। अगले कुछ दिनों में कई महिलाओं और बीएमएमए ने सर्वोच्च न्यायालय में इस तरह की याचिकाएं दाखिल कीं। मुख्य न्यायाधीश जे.एस.केहर की अध्यक्षता में एक बहु-धार्मिक बेंच का गठन किया गया। मुख्य बिन्दु यह था कि पहली बार मुस्लिम महिलाओं ने अपने तलाक के खिलाफ लड़ाई में यह कहा कि तीन तलाक हमारे मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है। महिलाओं के अनुसार मौलानाओं ने उन्हें बताया कि जिस धर्म को वे मानती हैं उसमें उन्हें कोई मौलिक अधिकार नहीं हैं। सर्वोच्च न्यायालय की खंडपीठ ने कहा, "ये प्रथाएं अवैध, असंवैधानिक, भेदभावपूर्ण और लैंगिक न्याय के आधुनिक सिद्धांतों के खिलाफ थी।" एकतरफा और तात्कालिक तीन तलाक का शरिया या कुर्आन में कोई उल्लेख नहीं है यह पाकिस्तान, बांग्लादेश समेत 22 इस्लामिक देशों में प्रतिबंधित है। खंडपीठ ने इस तर्क को सही नहीं पाया कि चूँकि यह प्रथा 1400 वर्षों से चली आ रही है इसलिए इसे स्वीकार्य समझा जाना चाहिए। तुरंत तलाक केवल पापपूर्ण नहीं बल्कि अब अवैध भी है। समुदाय के पित्तृसत्तात्मक स्त्री-विरोधी कानूनों तथा धर्म की गलत व्याख्या के कारण मुस्लिम महिलाओं ने लम्बे समय से उत्पीड़न सहा है।

10.6 सारांश

भारतीय समाज जाति, धर्म, नस्ल और लिंग आदि आयामों के साथ एक बहु-सांस्कृतिक समाज है। इन आयामों ने राजनीति और समाज के विकास को प्रभावित किया है। औपनिवेशिक काल से ही लैंगिक मुद्दा भारत में एक महत्वपूर्ण मुद्दा रहा है। यह मुद्दा देश में महिला आंदोलनों का मुख्य आधार रहा है। लम्बे समय से इन आंदोलनों ने हिंसा और भेदभाव के खिलाफ महिलाओं को एकजुट किया है। रहने की बेहतर स्थिति और मानव अधिकार इन आंदोलनों की प्रमुख मांग रही है। स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के काल में एक नहीं बल्कि कई महिला आंदोलन आयोजित हुए। सांस्कृतिक और राजनीतिक एक समान समूह के रूप महिलाओं को प्रतिनिधित्व देने के लिए इन महिला आंदोलनों की आलोचना की गई। इसका सामान्य कारण यह था कि महिला आंदोलनों की चुनौतियों में एकरूपता का अभाव था। महिला आंदोलन जाति, धर्म, गरीबी व अन्य सामाजिक कारकों यथा शिक्षा आदि पर आधारित थे। ये केवल लैंगिक समस्याओं से जुड़े आंदोलन नहीं थे। पंजाब के ग्रामीण इलाकों में पोषण संबंधी एक अध्ययन के अनुसार पोषण में लैंगिक असमानता भूमिहीन परिवारों की अपेक्षा भू-स्वामियों के परिवारों में अधिक थी। यह जानना दिलचस्प है क्योंकि सामान्य तौर पर लोग इसके विपरीत परिणाम की आशा रखते हैं क्योंकि भूमिहीन को अपेक्षाकृत गरीब माना जाता है। इससे बालिकाओं को अधिक नुकसान हो सकता है। अध्ययन दिखाता है कि लिंग के अतिरिक्त कई ऐसे कारक हैं जो भारत में महिलाओं के जीवन यापन की स्थिति, अवसर और चुनौतियों को प्रभावित करते हैं। अन सुलझे मुद्दों और सवालों पर बहसें हो रही हैं और इसने महिला आंदोलनों को जीवंत बनाए रखा है। कुछ अन्य मुद्दे हैं - महिलाओं पर होने वाले एसिड अटैक के खिलाफ व्यापक अभियान, संसद में महिलाओं की समान भागीदारी आदि। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद महिला आंदोलनों की उपलब्धियां इन बहसों और विवादों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण रहीं हैं। भारत

में महिला आंदोलन की विभिन्न शक्तियों की सराहना करने की आवश्यकता है क्योंकि इन आंदोलनों ने विभिन्न क्षेत्रों की चुनौतियों यथा धर्मनिरपेक्षता, जातिगत आंदोलन आदि का मजबूती से सामना किया है। महिला आंदोलनों की वर्तमान स्थिति एक ऐसी आधारशिला उपलब्ध कराती है जिस पर भविष्य का निर्माण किया जा सकता है।

10.7 अभ्यास प्रश्न

1) महिलाओं के बारे में गाँधीजी का दृष्टिकोण क्या था ?

2) भारत में महिला आंदोलनों की प्रकृति की विवेचना कीजिए।

3) संक्षिप्त टिप्पणी लिखें

   क) दहेज-विरोधी आंदोलन

   ख) आंध्र प्रदेश में निषेध (शराब विरोधी) आंदोलन

   ग) मणिपुर में अफस्पा के खिलाफ आंदोलन

   घ) निर्भया आंदोलन

4) मौलिक अधिकार बनाम मुस्लिम पर्सनल लॉ के मुद्दे पर विस्तार से चर्चा करें।

10.8 संदर्भ

अग्रवाल, ममता, *वोमन्ज़ मूवमेंट्स इन इण्डिया : फॉर्म्स एण्ड नेशनल ऑर्गेनाइजेशन हिस्ट्री डिस्कशन.* n.d. http://www.historydiscussion.net/essay/womens-movements-in-india-forms-and-main-national-organisations/1801.

गुल रशिदा एण्ड अनीसा षफी, 'इण्डिया वोमन्ज़ मूवमेंट्स आफ्टर इण्डिपेंडेंस', *इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज,* वॉल्यूम 3(5), नं.46-54, मई, 2014 http://www.isca.in/IJSS/Archive/v3/i5/11.ISCA-IRJSS-2014-66.pdf

'हिस्ट्री ऑफ फेमिनिस्ट मूवमेंट इन इण्डिया', *आउटलुक,* दिसम्बर 20, 1995 https://www.outlookindia.com/magazine/story/history-of-feminist-movement-in-india/200428.

'ह्यूमन राइट्स, *जेंडर एण्ड इन्वायरमेंट : वोमन्ज़ मूवमेंट्स इन इण्डिया,* यूनिवर्सिटी ऑफ देहली https://sol.du.ac.in/mod/book/view.php?id=1474&chapterid=1388.

कबीर, नैला, 'जेंडर मेन्स्ट्रीमिंग इन पूवर्टी इरैडिक्शन एण्ड द मिलेनियम डिवलपमेंट गोल्स', *ए हैण्डबुक फॉर पॉलिसी मेकर्स एण्ड अदर्स स्टेकहोल्डर्स,* कॉमनवेल्थ सेक्रेटरिएट, इंटरनेशनल डिवपलपमेंट रिसर्च सेंटर, कनाडा, 2003

कपाडिया, सीता 'अ ट्रिब्यूट टू महात्मा गाँधी : हिज व्यूज ऑन वोमेन एण्ड सोशल चेंजेज़', *महात्मा गाँधीज राईटिंग्स एण्ड फिलोसफीज, एन.डी.* https://www.mkgandhi.org/articles/kapadia.htm.

मेहरोत्रा, दीप्ति प्रिया, 'द ऐंटी-एएफएसपीए मूवमेंट इन मनिपुर : कॉमन काज़ेज एण्ड डाइवर्स स्ट्रैटजीज़', *महात्मा वीकली,* वाल्यूम-LVI, नं. 40, सितम्बर 24, 2016 http://www.mainstreamweekly.net/article6695.html.

नागपाल, हिमांशी, 'द हिस्टोरिकल जर्नी ऑफ ऐंटी-डोरी लॉज़', *फेमिनिज़्म इन इण्डिया,* जून 21, 2017 https://feminisminindia.com/2017/06/21/historical-journey-anti-dowry-laws/.

रावचौधरी, अद्रिजा, 'इंटरनेशनल वोमन्ज़ डे 2018 : फाइव मास मूवमेंट्स स्प्रेडहेडेड बाय वोमेन इन इण्डिया', *इण्डियन एक्सप्रेस*, माच 8, 2018 https://indianexpress.com/article/research/international-womens-day-2017-five-mass-movements-spearheaded-by-women-in-india-4559761/.

'ट्रिपल तलाक़ : हाउ इण्डियन मुस्लिम वोमेन फौट एण्ड वॉन, द डाइवर्स बैट्टल', *बीबीसी न्यूज़*, अगस्त 22, 2017 https://www.bbc.com/news/world-asia-india-40484276.

अर्नर, कथरिन जी., 'चिपको एण्ड द रोज.कलर्ड ग्लासेज़ ऑफ इकोफेमिनिज़्म', 2003 www.utexas.edu/research/student/urj/journals/chipko_for_URJ.doc.

वर्नगार्ड, केनेथ, 'वोमेन्ज़ मूवमेंट्स इन इण्डिया : ए शॉर्ट समरी', *वर्डप्रेस*, मई 2011, https://verngaard.wordpress.com/womens-movements-in-india-a-short-summary/.

'वोमेन ऐडिंग सस्टेनेबिलिटी इन लोकल सेल्फ-गवर्नेंस', *मीडिया फॉर राइट*, एन.डी. http://www.mediaforrights.org/women-rights/english-articles/299-women-aiding-sustainability-in-local-self-governance.

'वोमेन्ज़ मूवमेंट्स इन इण्डिया आफ्टर इण्डिपेंडेंस', *यौज आर्टिकल लाइब्रेरी*, एन.डी. http://www.yourarticlelibrary.com/essay/womens-movements-in-india-after-independence/32974

इकाई 11 पर्यावरण संबंधी आंदोलन

संरचना

11.1 प्रस्तावना

लक्ष्य और उद्देश्य

11.2 पर्यावरण संबंधी आंदोलन

11.3 चिपको आंदोलन

11.4 नर्मदा बचाओ आंदोलन

11.5 साइलेंट वैली आंदोलन

11.6 जल संरक्षण आंदोलन

11.7 ग्रीन पीस आंदोलन

11.8 सारांश

11.9 अभ्यास प्रश्न

11.10 संदर्भ ग्रंथ

11.1 प्रस्तावना

महातमा गाँधी के जीवन और कार्यों का स्वातंत्रयोत्तर भारत पर व्यापक असर है। उनके शब्दों और कार्यों ने न सिर्फ भारत वासियों को बल्कि पूरे विश्व के लोगों को प्रेरित किया है। गाँधी जी प्रकृतिवादी थे और उन्होंने हमेशा प्रकृति और पर्यावरण का सम्मान करने का विचार दिया जो लोगों का पालन पोषण करता है। सादा जीवन - उच्च विचार की उनकी सोच और अपने आश्रमों में उन्होंने जो नियम लागू किये थे वे प्रकृति के साथ जीने के सिद्धांत के प्रति उनके समर्पण के बारे में बहुत कुछ बताते हैं।

जैसा कि गुहा रेखांकित करते हैं 'भारत के अंधाधुंध औद्योगिकीकरण के प्रति गाँधी जी की आपत्तियां आम तौर पर आधुनिक समाज में नैतिक मूल्यों के संकट के साथ साथ बढते स्वार्थ और प्रतियोगिता से संबंधित थीं लेकिन उसमें पारस्थितिकी से जुड़े सरोकार भी थे।'

1) प्रवीण सेठ ने भी अपने शब्दों में इसे बयां किया है। सेठ ने अपनी टिप्पणी में कहा था कि गाँधी जी ने तीन निरंतर आंदोलनों के प्रति सचेत किया था जो प्रर्यावरण को नुकसान पहुंचाते हैं जैसे निर्बाध औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और विकासशील देशों की कीमत पर लाभ कमाने वाली पूंजीवादी व्यवस्था। उन्होंने कहा कि 'गाँधी जी एक संतुलित दृष्टिकोण की अपेक्षा करते थे जिसमें ना तो व्यक्ति को और न ही प्रकृति को खतरा हो। गाँधी जी ने जब तकनीकी, अर्थव्यवस्था और समाज के बीच संतुलन पर जोर दिया तो उनकी उपेक्षा की गयी। लेकिन हमारे अनुभवों ने हमें उनकी प्रशंसा के लिए मजबूर किया है।'

2) प्राकृतिक हवा, जल और धूप से परिपूर्ण पारंपरिक जीवन के प्रति गाँधी जी की प्राथमिकता और शहरी जीवन के प्रति उनका असंतोष जगजाहिर है। इच्छाओं का स्वैच्छिक शमन और न्यूनतम संसाधनों के उपयोग के पक्ष में विचार देकर गाँधी जी ने ऐसा उदाहरण पेश किया है जिसका अनुसरण पीढ़ियां कर सकती हैं। निस्संदेह, हम

सुरुचि अग्रवाल, शोधार्थी, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली–25

ये कह सकते हैं कि गाँधी जी के दृष्टिकोण और उनके विचार ने पर्यावरण संबंधी सोच और व्यवहार को प्रभावित किया है और अहिंसक पर्यावरण संबंधी आंदोलनों को गति दी है।

अपने जीवनकाल में गाँधी स्वयं किसी भी पर्यावरण संबंधी आंदोलन में सक्रिय रूप से शामिल नहीं थे, लेकिन सत्याग्रह, अहिंसा और आत्म-बलिदान के उनके आदर्श ही थे जिसने देश में पर्यावरण संबंधी आंदोलनों की रूपरेखा तय की। गाँधी जी ने भविष्यवाणी की थी कि बेलगाम विकास और मानव लालच से पर्यावरण को नुकसान पहुंचेगा और इससे मानवों की मुश्किलें बढ़ेंगी।

लक्ष्य और उद्देश्य

इस यूनिट को पढ़ने के बाद आप समझ सकेंगे।

- गाँधी जी के दर्शन और तरीकों का पर्यावरण संबंधी आंदोलनों पर प्रभाव।
- पर्यावरण संबंधी आंदोलनों के उभार के कारण और उनके महत्व।
- प्रमुख और लोकप्रिय पर्यावरण संबंधी आंदोलन जो विगत वर्षों में चलाए गए।
- पर्यावरण संबंधी आंदोलनों को सफल बनाने के लिए अपनाए गए तरीके व तकनीक

11.2 पर्यावरण संबंधी आंदोलन

आम तौर पर उन आंदोलनों को पर्यावरण संबंधी आंदोलन समझा जाता है जो विकास परियोजनाओं के विरूद्ध चलाये जाते हैं क्योंकि ये परियोजनाएं बड़े पैमाने पर प्राकृतिक संसाधनों के अविवेकपूर्ण उपयोग और दोहन पर निर्भर करती हैं। संसाधनों का दोहन ऐसे किया जाता है मानो ये अपरिमित मात्रा में उपलब्ध हो, जबकि ये सही नहीं। इस तथ्य को नजरअंदाज कर दिया जाता है कि प्रकृति एक निश्चित मात्रा में प्रदान करती है और संसाधनों का दोहन मानवीय अस्तित्व के लिए गंभीर खतरा है। इसलिए ये आंदोलन प्रायः प्रकृति के दोहन के खिलाफ चलाये जाते हैं और पारस्थितिकी और पर्यावरण के दीर्घकालिक अस्तित्व का विचार पेश करते हैं।

प्रसिद्ध पर्यावरणविद डॉ. वंदना शिवा के मुताबिक 'आंदोलन बड़ी सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रियाएं होती हैं, हांलाकि इनका स्वरूप आंदोलन चलाने वालों की अपेक्षाओं से बड़ा हो जाता है। ये आंदोलन निश्चित रूप से महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि ये अनेकों लोगों और घटनाओं को जोड़ते है जो सामाजिक बदलाव में बड़ी भूमिका निभाते हैं।' पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधन संरक्षण से संबंधित आंदोलनों में बड़ी संख्या में स्थानीय लोगों औ समुदायों की सहभागिता रहती है। सामाजिक बदलाव लाने वाले इन आंदोलनों ने आने वाले समय के लिए कई श्रेष्ठ उदाहरण पेश किये हैं।

"पारस्थितिकी संबंधी आंदोलनों से संबंधित उनके शब्दों को उद्धृत करना यहां उपयुक्त है। पारस्थितिकी आंदोलन अहिंसक विश्व व्यवस्था के लिए चलाये जाने वाले राजनीतिक आंदोलन हैं जिनमें अस्तित्व के विकल्प को संरक्षित करने के लिए प्रकृति का संरक्षण किया जाता है। इनका प्रभाव बढ़ रहा है। ये स्थानीय हैं लेकिन इनका जो व्यापक प्रभाव है इसी में इनकी सफलता निहित है। ये न्यूनतम मांगों के साथ अस्तित्व के अधिकार की मांग करते हैं ताकि इन्हें शांतिपूर्ण और न्यायपूर्ण विश्व में जीवन का अधिकार मिले। जमीन से जुड़े इन आंदोलनों की सफलता अस्तित्व के वैश्विक मुद्दे से जुड़ी है। जब तक वैचारिक और जीवन पद्धिति के स्तर पर विश्व की पारस्थितिकी पुनर्संरचना नहीं होती विश्व में शांति और न्याय

का उल्लंघन होता रहेगा और अंततरू इससे मानवीयता के अस्तित्व पर खतरा मंडराता रहेगा।"

पश्चिम के विपरीत, पर्यावरण और प्रकृति के लिए भारत की चिंता सदियों पुरानी है जहां प्राकृतिक संसाधनों और प्रकृति के प्रति चिंता जीवन शैली का एक हिस्सा थी। भारत में पर्यावरण संबंधी आंदोलन कमोबेश जमीनी स्तर पर संचालित किये जाते रहे हैं और इनमें से ज्यादातर की बागडोर शिक्षित और अभिजात्य वर्ग नहीं बल्कि ग्रामीणों और जनजातीय समुदाय के हाथों में रही है। शुरू में इनका आंदोलन बड़ी कंपनियों के खिलाफ होता था जो व्यापारिक उद्देश्यों के लिए वन संसाधनों का अंधाधुंध दोहन करते थे। बाद में ये आंदोलन जल, वनस्पति और जीव, जैव विविधता के संरक्षण और जंगलों की व्यापक कटाई से लेकर हाल में नदी के प्रदूषण के विरोध पर केन्द्रित हो गये। गंगा और यमुना सफाई कार्ययोजना इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

वन संरक्षण के सबसे पुराने ज्ञात मामलों में से एक 1730 का है, जब राजस्थान राज्य में बिश्नोई समुदाय के लगभग 300 सदस्यों ने अमष्ता देवी नाम की महिला के नेतृत्व में खेजड़ी पेड़ों से लिपट कर उन्हें कटने से बचाने की कोशिश की और इस प्रयास में उनकी जान चली गयी। बताया जाता है कि ब्रिटिश शासन के दौरान प्राकृतिक संसाधनों का दोहन प्रमुखता से शुरू हुआ था, जब बड़े पैमाने पर वन संसाधनों का इस्तेमाल वाणिज्यिक उद्देश्यों और रेलवे नेटवर्क तैयार करने के लिए किया जाता था। स्थानीय जनजातीय वर्ग और समुदाय प्राकृतिक संसाधनों को बचाने के लिए विशेष रूप से आगे आए, केवल अपनी आजीविका की जरूरतों को बनाए रखने के लिए नहीं ,बल्कि व्यापक रूप में अपने राष्ट्र को ध्यान में रखकर। स्वतंत्र भारत में चिपको आंदोलन एक ऐसा अग्रणी आंदोलन है जिसका दूसरों ने अनुकरण किया है।

11.3 चिपको आंदोलन.1973

एक अहंसिक सामाजिक और पारस्थितिकी संबंधी चिपको आंदोलन की शुरुआत मौजूदा उत्तराखंड राज्य के हिमालय पर्वत क्षेत्र गढ़वाल में हुई थी। यह क्षेत्र अपनी संवेदनशील पारिस्थितिकी के लिए जाना जाता है। भूकंप प्रभावित इस क्षेत्र में तेज कटाव वाली नदियां और गहरी घाटियां हैं जहां कृषि कार्य आसान नहीं। स्थानीय समुदाय यहां के बड़े वन क्षेत्र और रिजर्व से चारा, ईंधन और रेशम ले जाते हैं जो इनकी आजीविका का साधन हैं। इस इलाके में आय के अवसर कम होने के कारण पुरूष वर्ग आजीविका की तलाश में क्षेत्र से बाहर चला जाता है जबकि महिलाएं गांवों में ही रह जाती हैं जो उपलब्ध संसाधनों के संरक्षक की भूमिका निभाती हैं।

इस क्षेत्र में बड़े पैमाने पर जंगलों की कटाई हुई क्योंकि बढ़ती आबादी और शहरी रिहाइश की जरूरतों को पूरा करने के लिए वनों का व्यापक स्तर पर दोहन किया गया। यहां ये उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि पहला वन कानून ब्रिटिश शासन में लागू किया गया। व्यापारिक जरूरतों को पूरा करने और रेल लाइन बनाने के लिए लकड़ी की बढ़ती मांग के मद्देनजर टिहरी, गढ़वाल स्टेट में 1840 और 1885 के बीच जंगलों को लीज पर ठेकेदारों को दे दिया गया। ठेकेदारों के निहित हितों की रक्षा के लिए वन कानून लागू किये गये। स्थानीय लोगों के हाथ से अधिकार छीन कर सरकारी वन अधिकारियों को सौंप दिये गये। रसूखदार ठेकेदारों द्वारा किये जा रहे अतिक्रमण का स्थानीय आबादी ने जबरदस्त विरोध किया। ये अतिक्रमण उन संसाधनों पर था जिन पर स्थानीय लोगों का पारंपरिक अधिकार था।

पहाड़ियों में बड़े पैमाने पर जंगलों की कटाई और घटते पेड़ों के कारण गांव की महिलाओं को जरूरी चारा और ईंधन इकट्ठा करने के लिए ज्यादा समय और मेहनत करना पड़ता था क्योंकि वे मुख्यतया इन जरूरतों के लिए जंगल पर ही निर्भर थीं। कई बार उन्हें जरूरी सामान जुटाने के लिए पांच किलोमीटर की दूरी भी तय करनी पड़ती थी। जंगल कम होने के कारण भीषण बाढ़ और भूस्खलन का खतरा मंडराने लगा जिसके कारण घर और फसलें पानी में डूबने लगीं। इनकी वजह से लोगों का आवागमन प्रभावित होने लगा और सिंचाई सुविधाएं अस्त व्यस्त हो गयीं।

वर्ष 1973 में अलकनंदा घाटी के क्षेत्र में आई बाढ़ ने जीवन और संपत्ति को बड़ा नुकसान पहुंचाया। इस क्षेत्र में व्यापारिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जंगलों की कटाई के कारण ये स्थिति आई। इस क्षेत्र में पेड़ों की कटाई के लिए ठेकेदारों ने बड़े स्तर पर नीलामी की योजना बनाई थी लेकिन महिलाओं और ग्रामीणों की सक्रियता और सतर्कता के कारण उन्हें अपने कदम वापस खींचने पड़े। एक बार ऐसा मौका आया जब ठेकेदारों ने गांवों में पुरूषों की अनुपस्थिति का फायदा उठाते हुए मजदूरों को पेड़ काटने के लिए भेजा ताकि जब तक गांव वालों को पता लगे और वे पेड़ों को बचाने के लिए आगे आएं तब तक बड़ी संख्या में पेड़ काट डाले जायें। लेकिन जब गांव की महिलाओं ने मजदूरों को कुल्हाड़ियों के साथ देखा तो उन्होंने इसका विरोध किया और पेड़ों को बचाने के लिए आगे आ गयीं। महिलाओं ने छोटे-छोटे समूहों में जंगल की निगरानी शुरू कर दी और जिन पेड़ों को मजदूर काट रहे थे उनसे लिपट गयीं। सुंदरलाल बहुगुणा, गौरी देवी और गंगा देवी के नेतृत्व में चला ये आंदोलन खासा कामयाब रहा। इसके परिणामस्वरूप सरकार ने इस क्षेत्र में हरे पेड़ों की कटाई पर रोक लगा दी।

इस घटना ने व्यापारिक उद्देश्यों के लिए पेड़ों की कटाई के खिलाफ इस क्षेत्र के सभी गांवों को एकजुट होने और आंदोलन को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित किया क्योंकि इस वजह से इस क्षेत्र की संवेदनशील पारस्थितिकी प्रभावित हो रही थी। सुदूर ग्रामीण इलाकों की महिलाएं 75 दिनों तक पैदल चलीं ताकि इस क्षेत्र को लोगों को जंगलों के व्यापारिक दोहन के खिलाफ विरोध प्रदर्शन में शामिल होने के लिए प्रेरित किया जा सके। पेड़ों को कटने से बचाने के लिए पेड़ों से लिपटने के तरीके का पहली बार उपयोग धूम सिंह नेगी ने हेनवाल में पिपलेथ गांव के पास सलेट जंगल के पास किया था।

चिपको आंदोलन रेनी तक ही सीमीत नहीं रहा बल्कि टिहरी, कुमाऊं के साथ साथ अन्य स्टेट जैसे अडवानी, अमरसर, चांचनीधर, डुंगरी, पैंटोली और बडियागढ़ में भी फैल गया। इस आंदालन का सबसे बड़ा फायदा ये हुआ कि सरकार ने इस क्षेत्र में पेड़ों की कटाई पर रोक लगा दी। साथ ही संयुक्त वन प्रबंधन तंत्र तैयार किया गया। इस प्रकार चिपको आंदोलन पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण आंदोलन बन गया। इसने इस तरह के आंदोलनों में पथप्रदर्शक के रूप में महिलाओं की भूमिकाओं को भी रेखांकित किया।

11.4 नर्मदा बचाओ आंदोलन-1985

नर्मदा भारतीय उपमहाद्वीप में पश्चिम की ओर बहने वाली सबसे बड़ी नदी है। इसका उद्गम स्थान शहडोल जिले के अमरकंटक पठार में है। यह नदी मध्यप्रदेश से महाराष्ट्र, गुजरात और राजस्थान के कुछ हिस्सों में बहती है। इस नदी के आस पास 81 प्रतिशत ग्रामीण इलाके हैं जहां मुख्य तौर पर भील, गोंड और बैगास जैसे जनजातीय आबादी रहती है जिनका मुख्य पेशा खेती है। नर्मदा बेसिन प्राकृतिक संसाधनों के मामले में काफी समृद्ध है।

भारत के योजनाकारों के मुताबिक नर्मदा घाटी एक पिछड़ा इलाका है जहां सिंचाई सुविधाओं का अभाव है। इसके खनिज और अन्य प्राकृतिक संसाधनों का सही तरीके से उपयोग नहीं हुआ है। इसकी पनबिजली क्षमता का भी पूरी तरह इस्तेमाल नहीं हुआ है और यहां बुनियादी सुविधाओं की स्थिति अच्छी नहीं है। इस इलाके में कम विद्युत खपत, अल्प औद्योगिक क्रियाकलाप, धीमा शहरी विकास, कृषि में कम उपज आधुनिक चिकित्सा, शैक्षिक और बैंकिंग सुविधाओं का अभाव जैसे अल्पविकास के चिन्ह हर जगह नजर आते हैं।

हालांकि इस परियोजना की भूमिका 1946 में ही बनी थी लेकिन संसाधनों के उपयोग, सिंचाई भूमि और जल के बंटवारे को लेकर संबंधित राज्यों के बीच विवाद के कारण इसमें विलंब होता गया। परियोजना तब जाकर शुरू हुई जब नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण (NWDT) ने भारत के सबसे बड़ी एकल नदी घाटी परियोजना के योजना और कार्य पर अपनी सहमति दे दी। इस परियोजना ने रोजगार उपलब्ध कराने, बाढ़ पर नियंत्रण रखने, घरेलू और औद्योगिक उपयोग के लिए जलापूर्ति करने और पर्यटन को बढ़ावा देने का भी वादा किया।

वास्तव में इस परियोजना में न सिर्फ कुशल नियोजन बल्कि सजग क्रियान्वयन का भी अभाव था। इस परियोजना में नदी बेसिन के प्राकृतिक संसाधनों के बड़े पैमाने पर दोहन की तैयारी थी जिससे बड़े वन भूमि और कृषि भूमि के पानी में डूब जाने का खतरा था। भूगर्भीय तौर पर संवेदनशील माने जाने वाले इस क्षेत्र में भूकंप का गंभीर खतरा था जिससे बांध को नुकसान पहुंचने की आशंका थी। यहां की 150,000 एकड़ से भी ज्यादा वन भूमि के डूबने का खतरा पैदा हो गया। साथ ही 350,000 एकड़ वन भूमि पर भी बाढ़ का खतरा मंडराने लगा जो नदी के बेसिन के अंतर्गत आने वाले जंगल का 11 प्रति शत था। वन भूमि के जलमग्न होने के खतरे की वजह से आस पास के इलाकों और यहां के भूमि संसाधनों पर दबाव काफी बढ़ गया क्योंकि बड़े पैमाने पर लोगों का पलायन हुआ। ये लोग बाढ़ में डूबने का खतरा महसूस कर रहे थे।

NWDT ने विस्थापित लोगों की देखभाल और मुआवजे के लिए कुछ निर्देश तय किये थे जो उन्हें उनकी भूमि के बदले भुगतान किया जाना था। इसके लिए पर्याप्त पुनर्वास अनुदान की जरूरत थी। साथ ही विस्थापित लोगों के लिए मूलभूत सुविधाएं जैसे घर, बच्चों के लिए स्कूल, डिस्पेंसरी और आवागमन के साधन मुहैया कराने की भी जरूरत थी। इन निर्देशों में विस्थापितों के लिए जमीन अधिग्रहण का प्रावधान शामिल नहीं था और जमीन अधिग्रहण और पुनर्वास धन मुहैया कराने की जिम्मेदारी सरकार पर डाल दी गयी। इस वजह से नये गांवों में बेरोजगारी और वैकल्पिक आय के अभाव की चुनौतियां भी खड़ी हो गयीं। पुनर्वास प्रक्रिया का स्तर हर राज्य में अलग अलग था। गुजरात ने मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र की तुलना में बेहतर मुआवजा प्रदान किया और पुनर्वास सुविधाएं मुहैया कराईं। सुरक्षित आर्थिक भविष्य से नाउम्मीद विस्थापितों ने अपने अधिकारों के लिए लड़ने और न्याय हासिल करने के लिए नर्मदा बचाओ आंदोलन शुरू कर दिया। यह आंदोलन स्वतंत्रता के बाद किसी विकास परियोजना के विरोध में चलाया जाने वाला सबसे लंबा आंदोलन था जिसमें विस्थापितों के अधिकारों और उन्हें पर्याप्त मुआवजा प्रदान करने के लिए जबरदस्त संघर्ष दिखा।

नर्मदा बचाओ आंदोलन मुख्यतया विकास के तौर तरीके के खिलाफ चलाया जाने वाला आंदोलन था। यह एक तरह से बांध निर्माण से प्रभावित लोगों को न्याय सुनिश्चित करने वाली जंग थी। इस आंदोलन का मुख्य उद्देश्य सरदार सरोवर परियोजना का विरोध था जो नर्मदा पर बनने वाला सबसे बड़ा बांध था। ये आंदोलन 1985 में शुरू हुआ जिसमें भूख हड़ताल और एकजुटता जुलूस के आयोजन के साथ साथ जागरूकता फैलाने के लिए

मीडिया के जरिये अभियान चलाया गया। लोगों को न्याय प्रदान करने के लिए चलाया जाने वाला यह प्रमुख अहिंसक आंदोलन था। वर्ष 1989 में यह पूरी तरह से पर्यावरण संबंधी और आजीविका से जुड़ा आंदोलन बन गया। इसके जरिये बांध के निर्माण का तीव्र विरोध किया गया और न्यायपूर्ण पुनर्वास नीति की मांग की गयी। इस आंदोलन की प्रेरणादायी नेता मेधा पाटेकर ने कई बार अनशन और भूख हड़ताल किया जिसके कारण मजबूर होकर विश्व बैंक को इस परियोजना की स्वतंत्र समीक्षा करनी पड़ी जो इस परियोजना के प्रायोजकों में से एक था। अंततः इस परियोजना को 1995 में रद्द कर दिया गया। इस आंदोलन के कार्यकर्ताओं को संघर्ष को दौरान कड़ी पुलिस कार्रवाई और लाठी चार्ज का सामना करना पड़ा। इस आंदोलन में बडवानी, ओंकारेश्वर, अलीराजपुर और झाबुआ के कार्यकर्ताओं की सक्रिय भागीदारी रही।

ये मामला आखिरकार सुप्रीम कोर्ट तक पहुंच गया जब एनबीए ने याचिका दाखिल की। अदालत ने बांध के निर्माण पर तो रोक नहीं लगाई लेकिन कुछ विशेष शर्तों पर काम जारी रखने को मंजूरी दी। एक लंबी कानूनी लड़ाई के बावजूद भले ही फैसला एनबीए के पक्ष में नहीं रहा लेकिन उसने अहिंसक आंदोलन जारी रखा। कार्यकर्ताओं के खिलाफ पुलिस की दमनात्मक कार्रवाई का मामला जब जबलपुर हाईकोर्ट पहुंचा तो अदालत ने विरोध प्रदर्शन और भूख हड़ताल करने के साथ साथ शांतिपूर्वक संघर्ष चलाने के विस्थापित लोगों के अधिकारों को मान्यता दी। अदालत ने राज्य सरकार को आदेश दिया कि वह उन सत्याग्रहियों को पर्याप्त मुआवजा दे जिन्हें अवैध गिरफ्तारी और पुलिस कार्रवाई झेलनी पड़ी। जीवन और आजीविका के अधिकार को मान्यता देते हुए पुनर्वास के मुद्दे पर फिर चर्चा की गयी। कई कार्यकर्ताओं ने गिरफ्तारियां दीं, अहिंसक संघर्ष चलाया और भूमिहीनों के भूमि सहित पुनर्वास की मांग की। साथ ही उन्होंने भ्रष्ट अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई की भी मांग की जिन पर पुनर्वास में शामिल लोगों को मुआवजा बांटने की जिम्मेदारी थी। वहां और भी कई बड़े संघर्ष हुए जब इंदिरा सागर और ओंकारेश्वर से प्रभावित लोगों ने अनिश्चितकालीन भूख हड़ताल शुरू कर दी और उनके समर्थन में तीन दिनों का रिले अनशन शुरू कर दिया। ये पूरी तरह से स्पष्ट हो गया था कि लोगों ने अपने संपूर्ण अधिकार और न्यायपूर्ण मांगों को हासिल करने के लिए शांतिपूर्ण तरीके से आंदोलन चलाने का संकल्प ले लिया था।

अदालत ने अपनी सुनवाईयों के दौरान और फैसले में भी विस्थापितों के लिए पुनर्वास कार्य चलाने को लेकर अधिकारियों को कड़ी फटकार लगाई और कहा कि अगर ऐसा नहीं हुआ तो बांध का काम रोका जा सकता है। बांध का निर्माण कार्य जारी रखने की अनुमति देते हुए अदालत ने साथ ही साथ पुनर्वास कार्य पर तत्काल ध्यान देने का कड़ा आदेश दिया। एनबीए अपनी रणनीतियों के जरिये कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका को अपने संघर्ष से प्रभावित करने में कामयाब रहा। इसने बड़े बांधों से होने वाले विनाश और विस्थापन के खिलाफ अभियान चलाया और किसानों, श्रमिकों मछुआरों और अन्य प्रभावित लोगों के अधिकारों के लिए संघर्ष किया।

11.5 साइलेंट वैली आंदोलन-1986

साइलैंट वैली पार्क भारत के आखिरी वर्षा वनों और उष्णकटिबंधिय सदाबहार वनों में से एक था। ये पार्क दक्षिण भारत में केरल के पालक्काड जिले में नीलगिरी की पहाड़ियों में स्थित है। अंग्रेजों ने इस इलाके को झींगुरों से मुक्त होने के कारण साइलेंट वैली का नाम दिया था। सबसे पहले साइलैंट वैली ने अपनी समृद्ध प्राकृतिक विविधता के कारण नहीं बल्कि घाटी में केरल राज्य विद्युत बोर्ड द्वारा प्रस्तावित पनबिजली परियोजना के खिलाफ

स्थानीय लोगों के लगातार संघर्ष ने दुनिया का ध्यान आकृष्ट किया।। वर्ष 1928 में सैरन्ध्री में कुन्थीपुझा नदी के पास के इलाके को परियोजना के लिए चिन्हित किया गया।

साइलैंट वैली आंदोलन की ओर 1980 में देश का ध्यान तब गया जब हर जगह सरकार की ओर से विकास परियोजनाओं चलाई जाती थीं। बांधों को विकास का प्रतीक माना जाता था। प्रस्तावित बिजली परियोजना से पार्क की वन्यजीव विविधता को खतरा था जिसके कारण 1970 में पर्यावरणविदों ने सामाजिक आंदोलन शुरू किया जिसे 'सेव साइलेंट घाटी' का नाम दिया गया। वर्ष 1976 में केरल राज्य विद्युत बोर्ड ने बांध बनाने की योजना का ऐलान किया तब ये मसला लोगों की निगाह में आया।

इस आंदोलन ने आने वाली पीढ़ियों के लिए एकस्वर से पर्यावरण की रक्षा की महत्ता को रेखांकित किया। मैकाक लंगूर का संरक्षण सदाबहार जंगल को पूर्ण विनाश से बचाने के अहिंसक संघर्ष का प्रतीक बन गया। इस अभियान में नर्मदा बचाओ आंदोलन, बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी और साइलेंट वैली एक्शन फोरम जैसे पर्यावरण के लिए संघर्षरत समूहों ने इस अभियान में हिस्सा लिया। इस आंदोलन को समर्थन देने के लिए वंदना शिवा, मेधा पाटकर, सुंदरलाल बहुगुणा, बाबा आमटे और सुनीता नारायण जैसी शख्सियतें आगे आयीं। इस अभियान में प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का भी सहयोग लिया गया जिसकी वजह से साइलैंट वैली के पारिस्थितिकी तंत्र के समर्थन में जनमत तैयार हुआ।

सबसे पहले स्थानीय लोगों ने आंदोलन शुरू किया और बाद में इसका नेतृत्व केरल सशस्त्र साहित्य परिषद ने अपने हाथ में ले लिया। परिषद ने कई वैज्ञानिक अध्ययन कराये और मानवता के हितों में ध्यान में रखकर पारिस्थितिकी तंत्र को मूल रूप में संरक्षित रखने की जरूरत पर जोर दिया। परिषद के जीवविज्ञानी नेताओं ने घाटी की समृद्ध जैव विविधता के मद्देनजर इसके संरक्षण की जरूरत को रेखांकित किया।

परिषद ने परियोजना के खिलाफ जनसमर्थन तैयार किया। पूरे राज्य में इसने विज्ञान समूह तैयार किया था जो न्यूज लेटर और पत्र पत्रिकाओं के जरिये विद्यार्थियों, युवाओं और आम जनता में जागरूकता फैलाते थे। इसने संबंधित मुद्दों को लेकर केरल सरकार को एक ज्ञापन भेजा था और समस्याओं का समाधान हो गया था। इसने स्ट्रीट प्ले, प्रदर्शनी, वाद विवाद और मैराथन मार्च का आयोजन किया था जो 400 गांवों में चला था। छात्र समुदाय इस प्रस्तावित परियोजना के खिलाफ खड़ा हो गया और राज्य के इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ जब छात्रों ने पर्यावरण के संरक्षण के लिए आंदोलन में भाग लिया।

परिषद की ओर से चलाये गये व्यापक आंदोलन को देखते हुए केन्द्र सरकार ने प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक डा. एमएस स्वामीनाथन को इस मामले में जांच के लिए नियुक्त किया। वर्ष 1983 में केन्द्र सरकार ने राज्य सरकार को बंद करने का निर्देश दिया और 15 नवंबर को साइलैंट वैली जंगल को नेशनल पार्क घोषित किया गया। एक सितंबर,1986 को साइलैंट वैली नेशनल पार्क को नीलगिरी जीवमंडल रिजर्व का मुख्य क्षेत्र के रूप में मान्यता दी गयी। उसके बाद से साइलैंट वैली के पारिस्थितिकी तंत्र को संरक्षित रखने के लिए दीर्घकालिक प्रयास किये गये हैं।

साइलैंट वैली आंदोलन कई मामलों में भारत में चल रहे पर्यावरण संबंधी आंदोलनों के लिए महत्वपूर्ण था। इस आंदोलन का मुख्य योगदान ये था कि इसने पर्यावरण संरक्षण के लिए लोगों के जागरूक किया। इसने ये भी अहसास कराया कि प्रभावी पर्यावरण संरक्षण का लक्ष्य वैज्ञानिक समुदाय का सहयोग लेकर स्थानीय लोगों की सक्रिय भागीदारी के जरिये ही हासिल किया जा सकता है, जिसमें नागरिक समाज का भी सक्रिय जुड़ाव हो।

11.6 जल संरक्षण आंदोलन-2000

जल संरक्षण आंदोलन पानी बचाने के पारंपरिक उपायों को संरक्षित रखने का एक प्रयास है। सरकार द्वारा चलायी जाने वाली बड़ी विकास परियोजनाओं के कारण पारंपरिक जल संरक्षण व्यवस्था निष्प्रभावी हो गयी। इन आंदोलनों ने विकास के मौजूदा प्रभावी मॉडलों का विकल्प भी पेश किया। औद्योगिक उद्देश्यों के लिए भूजल के अति-दोहन ने जल की उपलब्धता खतरनाक स्तर तक घटा दी है। भूमंडलीकरण पर जोर और पानी का व्यवसाय करने वाली ताकतों और उनके द्वारा पानी को उपभोक्ता सामग्री बना दिये जाने के कारण प्रकृति और मनुष्य के बीच का सहजीवी संबंध बदल गया है। वास्तव में समाज का गरीब वर्ग इस नव साम्राज्यवादी शोषण का शिकार हो रहा है।

सरकार की भूमिका प्रदाता से बदलकर प्रोत्साहक की हो गयी है और जल नीति में भी सरकार की परवर्तित भूमिका परिलक्षित हो रही है। सरकार बहुराष्ट्रीय कंपनियों की समर्थक बन गयी है। इस बदलते परिदृश्य में जनता के हितों की अवहेलना हो रही है और अंततरू व्यक्तियों और समुदायों के मूलभूत प्राकृतिक अधिकारों के संरक्षण के लिए चलाये जाने वाले संघर्षों में इसका परिणाम सामने आ रहा है। नागर व्यवस्था में जल संरक्षण के लिए आंदोलन चलाये जा रहे हैं। इसमें दो तरह की सक्रियताएं सामने आ रही हैं जिनमें एक है जल संरक्षण के लिए सरकार और नागरिक समाज के बीच सुपरिभाषित सहयोग और दूसरा है नागरिक समाज का सरकार के सहयोग के बगैर अपने स्तर पर किया जा रहा संसाधन संरक्षण का प्रयास। उदाहरणार्थ, मध्य प्रदेश सरकार ने जल संकट के समाधान के ख्याल से राज्य और नागरिक समाज के बीच सहयोगात्मक संबंध विकसित करने के लिए अनगिनत प्रयास किये हैं। जल अभिषेक अभियान में समुदाय जल संरक्षण का सक्रिय भागीदार बन गया है।

जो आंदोलन सरकार के सहयोग के बगैर चल रहे हैं वे भी जल संकट के समाधान के लिए सकारात्मक प्रयास कर रहे हैं। ऐसा इसलिए भी हैं क्योंकि इन आंदोलनों में शामिल लोग समाज में सरकार की भूमिका को लेकर सहमत नहीं हैं। सरकार पूंजीवाद के मौजूदा नव-उदारवादी चरण में वैश्विक वित्तीय पूंजी को बढ़ावा दे रही है और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के एजेंट के रूप में काम कर रही है, साथ ही उनके हितों का संरक्षण कर रही है। इस संदर्भ में राजेन्द्र सिंह की 'राष्ट्रीय जल चेतना यात्रा' का नाम लिया जा सकता है। सरकार के किसी सहयोग के बगैर भूजल के संरक्षण के प्रयास किये जा रहे हैं और ये शुद्ध रूप से स्वैच्छक प्रयास के भरोसे हैं। उदाहरण के लिए, दक्षिण महाराष्ट्र के उस्मानाबाद जिले में पिछले तीन साल से भयंकर सूखा पड़ रहा है। भूजल लगभग खत्म हो गया है और सिंचाई परियोजनाएं यहां की गंभीर परिस्थिति से निपटने में नाकाम हैं। अधिकारियों ने बगैर किसी सरकारी सहयोग के स्थानीय लोगों की सहभागिता के जरिये समस्या के समाधान का प्रयास किया। मार्च 2004 में उस्मानाबाद जिला प्रशासन ने भूजल के संरक्षण के उद्देश्य से स्थानीय आबादी को जागरूक बनाने के लिए टाटा इंस्टीच्यूट ऑफ सोशल साइंसेज के सहयोग से पानी यात्रा का आयोजन किया। ये यात्रा जिले के करीब 40 गांवों से गुजरी और भूजल के संरक्षण के महत्व का संदेश दिया। इस पानी यात्रा को करीब 40 एनजीओ ने समर्थन दिया था।

'राष्ट्रीय जल चेतना यात्रा' जल संबंधी चिंताओं को विभिन्न समुदायों के बीच साझा करने का एक प्रयास था। यह जल के निजीकरण और विश्व के बाजार में पानी के व्यवसायीकरण करने के प्रयासों के खिलाफ अभियान भी था। पानी के निजीकरण और उसे उपभोक्ता सामग्री करार देने का प्रयास ना सिर्फ अनैतिक है बल्कि ये समुदाय के अधिकार का भी

हनन करता है और जल संरक्षण और उसके दीर्घकालिक उपयोग के प्रति समुदाय की जिम्मेदारी को भी खंडित करता है। 'राष्ट्रीय जल चेतना यात्रा' जल संरक्षण की स्थानीय लोगों की संस्कृति और परंपरा को समृद्ध करने के लिए प्रति भी संकल्पित है। इसने जल संरक्षण की पारंपरिक विधियों को नया स्वरूप दिया और नदियों के पुनरूद्धार, जलवाही स्तर को रिचार्ज करने और प्रकृति के लिए वर्षा जल संरक्षण जैसे प्रयास किये।

जिन दो आंदोलनों के बारे में हमने चर्चा की है उनके बीच कई समानताएं हैं। दोनों ने पृथ्वी पर मानव और दूसरी जिंदगियों को बचाने के लिए भूजल स्रोतों के महत्व पर जोर दिया है ताकि यहां मानव और प्रकृति के बीच सहयोग के साथ विकास का स्वरूप तैयार हो। ये आंदोलन साम्राज्यवादविरोधी अभियान है और लोकतांत्रिक तरीकों से गाँधीवादी उपायों के जरिये समाज में बदलाव लाने का समर्थन करते हैं।

11.7 ग्रीन पीस आंदोलन-1971

ग्रीन पीस एक अंतरराष्ट्रीय पर्यावरण संबंधी संगठन था जिसकी स्थापना 1969 में अलास्का में अमेरिकी परमाणु हथियार परीक्षण विरोधी अहिंसक अभियान के दौरान हुई थी। ग्रीनपीस संभवत: सबसे कामयाब पर्यावरण संबंधी संगठन था जिसने अंहिसक तरीके से आंदोलन किया। निश्चित तौर पर यह ऐसे पहले संगठनों में से एक था। इसने वैचारिक दर्शन, स्पष्ट रणनीतिक स्वरूप, वैज्ञानिक अनुसंधान, राजनीतिक और कानूनी शोध के साथ साथ लॉबी के इस्तेमाल, निडर सीधी कार्यवाही और मीडिया के ध्यानाकर्षण के बेहतर समन्वय के जरिये न सिर्फ अपने संगठन के लिए बल्कि पर्यावरण के संरक्षण के क्षेत्र में भी काफी कामयाबी हासिल की। मौलिक ग्रीनपीस संगठन का केन्द्रीय दर्शन पृथ्वी की ओर से अहिंसक सीधी कार्यवाही था। यह एक प्रेरणादायक विचार था जिसने एक आंदोलन खड़ा किया।

ग्रीनपीस एक प्रमुख पर्यावरण संबंधी आंदोलन है जिसने पारंपरिक, राजनीतिक गतिविधियों और अहिंसक सीधी कार्रवाई का समन्वय करके काम किया। मुख्यतया अहिंसक कार्यवाही के नये-नये प्रयोग की वजह से वैश्विक पर्यावरण संबंधी आंदोलन और अनेकों राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय नीतियों के एजेंडे पर इसका गहरा असर था। इसके कार्यकर्ताओं ने छह बड़े अभियान चलाये। (1) ग्लोबल वार्मिंग बंद करो, (2) प्राचीन वन बचाओ (3) जहरीले रसायन के उत्पादन और प्रदूषण पर रोक लगाओ, (4) खाद्य पदार्थ के आनुवांशिक छेड़छाड़ पर रोक लगाओ, (5) परमाणु मुक्त भविष्य सुनिश्चित करना और (6) विश्व के समंदरों का संरक्षण।

11.8 सारांश

हम एक ऐसे विश्व में रहते हैं जहां मानव की नियति बदलने में विज्ञान, तकनीकी और विकास की भूमिका लगातार बढ़ती जा रही है। हांलाकि विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों के अति दोहन की वजह से कई पर्यावरण संबंधी खतरे पैदा हो गये हैं। वास्तव में, मौजूदा स्थिति में विकास की अवधारणा ही विवादास्पद हो गयी है क्योंकि विकास के नाम पर हम अनैतिक रूप से प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कर रहे हैं। ये बात सही है कि ऐसा विज्ञान जो प्रकृति की जरूरतों का सम्मान ना करे और ऐसा विकास जो लोगों की जरूरतों का ख्याल नहीं रखे वो मानव के अस्तित्व के लिए खतरा है। गाँधी जी के हरित विचार हमें लोगों की जरूरतों के साथ प्रकृति के सामंजस्य को लेकर नयी दृष्टि पेश करते हैं।

गाँधी जी आधुनिक तौर पर एक पर्यावरणवादी नहीं थे। भले ही उन्होंने कोई हरित दर्शन नहीं पेश किया या प्रकृति पर कविताएं नहीं लिखीं लेकिन उन्हें हमेशा प्रयुक्त मानवीय

पारस्थितिकी का मसीहा माना जाता है। यह सच है कि गाँधी जी के जमाने में पर्यावरण संबंधी चिंताएं काफी कम थीं लेकिन प्रख्यात पर्यावरणवादी लेखक रामचंद्र गुहा उन्हें प्रारंभिक पर्यावरणविद मानते हैं। उनके लेखन में प्रकृति को लेकर उनके विचारों की झलक मिलती है। सत्याग्रह को लेकर उनके विचार सत्य और अहिंसा, सादा जीवन और विकास पर आधारित थे जो ये स्पष्ट करते थे कि दीर्घकालिक विकास प्रकृति और आस पास के परिवेश को नुकसान पहुंचाये बगैर कैसे संभव है। उनका विचार था कि प्रकृति के पास हर किसी की जरूरत को पूरा करने की क्षमता है लेकिन किसी के लालच को संतुष्ट करना उसके वश में नहीं। उनका ये विचार आधुनिक पर्यावरणवादियों के लिए प्रेरणास्रोत बन गया।

स्वतंत्रता के बाद तीव्र गति के विकास की वजह से भारत में पारस्थितिकी संबंधी समस्याएं खड़ी हुईं। जल संसाधन, वन और भूमि के इस्तेमाल की वजह से उन लोगों को नुकसान होने लगा जो अपने अस्तित्व के लिए इन संसाधनों पर निर्भर थे। भारत में लोगों के विस्थापन और प्राकृतिक संसाधनों के खिलाफ पर्यावरण आंदोलन शुरू हुए लेकिन ये स्पष्ट है कि इन पर गाँधी जी के सत्याग्रह और अहिंसा के विचार का खासा असर था। वर्ष 1970 के दशक में पर्यावरण संबंधी मुद्दे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उठने लगे और स्टॉकहोम सम्मेलन जैसे अंतरराष्ट्रीय आयोजन किये गये। भारत ने अंतरराष्ट्रीय नियमों और कानूनों के अनुरूप प्राकृतिक पर्यावरण के संरक्षण के प्रति अपना संकल्प पेश किया।

11.9 अभ्यास प्रश्न

1) गाँधी जी के दर्शन विचार और तौर तरीकों ने समकालीन समय में पर्यावरण संबंधी आंदोलनों को कैसे प्रभावित किया ?

2) विभिन्न पर्यावरण संबंधी आंदोलन के शुरू होने के क्या कारण थे ?

3) चिपको आंदोलन क्या था विस्तार से व्याख्या करें।

4) नर्मदा बचाओ आंदोलन के बारे में संक्षिप्त चर्चा करें।

5) साइलेंट वैली आंदोलन की संक्षिप्त व्याख्या करें।

6) दो प्रमुख जल संरक्षण आंदोलनों के बारे में अपने विचार पेश करें।

11.10 संदर्भ ग्रंथ

अब्बास, बी.एम., *द गंगेज़ वाटर डिस्प्यूट,* द यूनिवर्सिटी प्रेस, ढाका, 1982

अग्रवाल, ए.एस. नारायण एण्ड आई. खुराना, *मेकिंग वाटर इवरीबडीज़ बिजनेस,* सेंटर फॉर साइंस एण्ड इनवायरमेंट, न्यू देहली, 2011, पृ. xii

अहमद, क्यू. के. ''टूवर्ड्स पूवर्टी ऐलिविऐशन : द वाटर सेक्टर पर्सपेक्टिव', वाटर रिसोर्सेज डिवलपमेंट, वॉल्यूम-19, नं.2, 2003, पृ.263-77

अहमद, क्यू. के., ऐ.के. बिस्वास, आर. रंगचारी, एण्ड एम.एम. सैंजु, (ऐडज) *गंगेज़-ब्रह्ममपुत्रा मेघ्ना रीजन : ए फ्रेमवर्क फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट,* द यूनिवर्सिटी प्रैस, ढाका, 2001

अलघ, वाय.के.जी., पानागरे एण्ड बी. गुज्जा (ऐडज) *इंटरलिंकिंग ऑफ रिवर्स इन इण्डिया : ओवरव्यू एण्ड केन बेतवा लिंक,* ऐकेडमिक फाउण्डेशन, न्यू देहली, 2006

अमीन, समीर, यूरोसेंटरिज़्म, आकार बुक्स, देहली, 2008

बाउन, माइकल एण्ड जॉन मे, *द ग्रीनपीस स्टोरी,* डोर्लिंग सिकंडर्सले, न्यू यॉर्क, 1989

चौपड़ा, कंचन एण्ड बिश्वनाथ गोलदार, *सस्टेनेबल डेवलपमेंट फ्रेमवर्क फॉर इण्डिया : द केस ऑफ वाटर रिसोर्सेज़,* इंस्टीट्यूट ऑफ इकोनॉमिक ग्रोथ, देहली, 2000

चौपड़ा, कंचन सी. एच. हनुमंथ राव एण्ड रामप्रसाद सेनगुप्ता, 'वाटर रिसोर्सेज़, सस्टेनेबल लाइवलीहुड एण्ड इकोसिस्टम सर्विसेज़', पेपर्स फ्रॉम द सेकण्ड बीनियल कंफ्रेंस ऑफ द इण्डियन सोसाइटी फॉर इकोलॉजीकल, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, न्यू देहली, 2003

डेल, स्टीफन, मैकलुहान्ज़ चिल्ड्रन : द ग्रीनपीस मैसेज एण्ड द मीडिया, *बिटवीन द लाइन्स, टोरंटो, 1996*

इंटरिंग द ट्वंटी-फर्स्ट सेंचुरी, वर्ल्ड डेवलपमेंट रिपोर्ट (1999-2000), वर्ल्ड बैंक, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

गोल्डस्मिथ, ई. एण्ड एन. हिल्डयार्ड (ऐडज़) *द सोशल एण्ड इन्वायरमेंटल इफेक्ट्स ऑफ लार्ज डैम्ज़,* वॉल्यूम 1-2, (ओवरव्यू एण्ड केस स्टडीज), वेडब्रिज इकोलोजिकल सेंटर, कोर्नवाल (यूके) 1984

गुहा, रामचन्द्र, *महात्मा गाँधी एण्ड द इन्वायरन्मेंटल मूवमेंट इन* ए. रघुरामराजु (ऐड) डिबेटिंग गाँधी : ए रीडर, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू देहली, 2006

गुहा, रामचन्द्र, *द अनकेंट वूड्स,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू देहली, 1989

हन्टर, रॉबर्ट एण्ड रेक्स वेलेर, *टू सेव ए व्हेल : द वोयेजेज ऑफ ग्रीनपीस,* क्रोनिकल सैन फ्रैंसिस्को, 1978

हन्टर, रॉबर्ट, *वॉरियर्स ऑफ द रेनबो : ए क्रोनिकल ऑफ द ग्रीनपीस मूवमेंट, होल्ट,* रिनचार्ट एण्ड विन्स्टन, न्यू यॉर्क, 1979

किंग, एम., *डेथ ऑफ द रेनबो वॉरियर,* पेंगुइन, न्यू यॉर्क, 1978

मैकटैगर्ट, डेविड एण्ड रॉबर्ट हण्टर, *ग्रीनपीस III : जर्नी इन्टू द बॉम्ब,* विलियन कोलिन्स सन्ज़ एण्ड कंपनी, लन्दन, 1978

माइल्स, मरिया, एण्ड वन्दना शिवा, *इकोफेमिनिज़्म,* न्यू दिल्ली, 1993

नरमदा बचाओ आन्दोलन, *सुप्रीम कोर्ट वर्डिक्ट* www.sabrang.com/news/2005/narmadaverdict.pdf.

एनसीआईडब्ल्यूआरडीपी, 'वाटर रिसोर्सेज़ डेवलपमेंट प्लान ऑफ इण्डिया-पॉलिसी एण्ड इश्यूज', *गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया मिनिस्ट्री ऑफ वाटर रिसोर्सेज़,* नेशनल कमीशन फॉर इंटिग्रेटेड वाटर रिसोर्सेज़ डेवलपमेंट प्लान, न्यू देहली, 1999

परमेश्वरन, एम.पी., 'सिग्निफिकेंस ऑफ साइलेंट वैली', *इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली,* वॉल्यूम-14, नं.27, जुलाई 7, 1979, पप़1117-119

पैट, ए.के., 'रिवीविंग साइलेंट वैली', *इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली,* अगस्त 14, 2004

प्रसाद, एम.के., ए.पी. परमेश्वरन, वी.के. दामोदरन, के.एन.एस. नायर एण्ड के.पी. कन्नन, *द साइलेंट वैली हाइड्रोइलेक्ट्रिक प्रोजेक्ट,* केरला सस्ता साहित्य परिशिष्ट, कोजीकोडे, 1979

रोबी, डेविड, *आईज़ ऑफ फायर : द लास्ट वॉयेज ऑफ रेनबो वॉरियर,* न्यू सोसाइटी, फिलाडेल्फिया, 1986

शर्मा, एल.टी. एण्ड रवि शर्मा (ऐडज़), *डैम्ज़-ए सेकण्ड लुक : डेवलपमेंट विदाउट डिस्ट्रक्शन,* इन्वायरन्मेंट सेल, गाँधी पीस फाउण्डेशन, न्यू देहली, 1981

सेठ, प्रवीन, *थियरी एण्ड प्रेक्सिस ऑफ इन्वायरमेंट : ग्रीन प्लस गाँधी,* गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, 1994

शिवा, वन्दना, *स्टेयिंग अलाइव : वोमेन, इकोलोजी एण्ड डेवलपमेंट इन इण्डिया,* न्यू देहली, 1988

स्पेथ, जेम्स गस्टेव, *ग्लोबल इन्वायरन्मेंट चैलेंजेज : ट्रांजीशन्श टू ए सस्टेनेबल वर्ल्ड,* ओरियंट लौंगमैन, हैदराबाद, 2004

सुब्रहमन्यम, के.वी., 'इन्वायरमेंट ऑफ साइलेंट वैली', *इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली,* वॉल्यूम-15, नं.40, अक्टूबर 4, 1980, पृ.1651-1652

टेलर, बी.आर., *इकोलॉजिकल मूवमेंट्स : द ग्लोबल इमर्जेंस ऑफ रेडिकल एण्ड पॉपुलर इन्वायरमेंट,* स्टेट यूनिवर्सिटी प्रैस ऑफ न्यू यॉर्क प्रैस, अल्बेनी, 1995

टर्नर, कैथरी, जी., *चिपको एण्ड द रोज़ कलर्ड ग्लासेज़ ऑफ इकोफेमिनिज़्म,* 2003 www.utexas.edu/research/student/urj/journals/chipko_for_URJ.doc.

वेबर, थोमस, *हगिंग द ट्रीज : द स्टोरी ऑफ द चिपको मूवमेंट,* विकिंग पब्लिशर्स, न्यू देहली, 1988

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY